बाबा राघवदास

: लेखक :

पुरुषोत्तम पाण्डुरंग गोखले

कराड

मकर संक्रमण
१८८२

प्रभावती

१४ जनवरी
१९६१

बाबा राघवदास

: लेखक :

पुरुषोत्तम पाण्डुरंग गोखले,

कराड

मकर संक्रमण
१८८२

प्रथमावृत्ति

१४ जनवरी
१९६१

मूल्यः- रु. २ = ५० न. पैसे

[सर्व हक लेखकके स्वाधीन]

प्रकाशकः- विद्याधर पुरुषोत्तम गोखले, ४३६ सोमवार पेठ, कराड.

मुद्रकः- अ. कृ. कुलकर्णी, आनंद प्रिंटिंग प्रेस सातारा प्रायव्हेट लिमिटेड,
१८२ सोमवार पेठ, सातारा.

दलित–दुःखितोंकी सेवाही जिनके
जीवनका आनन्दही आनन्द है,

उन्हें

उनके प्रतिनिधिभूत पूज्यपाद
श्री बाबा राघवदासजीकी
यही वाङ्मयी पूजा

सादर समर्पण।

—पु. पां. गोखले.

धन्यवाद–

पाठकोंके सामने पस्तुत जीवनी सादर करते हुए मुझे आनंद होता है। पूज्य बाबाजीकी जीवनी मराठीमें लिखकर मैंने दो साल पहले मेरी सेवा समर्पित की थी। आज राष्ट्रभाषामें मेरे पूज्य पिताजीने लिखी हुअी और आनंद प्रेसके श्री. अनंतराव कुलकर्णीजी तथा इनके कामगार और मेरी बहन इंदुमतीजी इनकी सहायतासे मुद्रित स्वरूप प्राप्त की हुई यह जीवनी पाठकोंके हाथमें देनेसे मेरी एक इच्छा पूरी हो गई है। इसलिये इन सबको मेरे धन्यवाद।

– वि. पु. गोखले
प्रकाशक

प्रास्ताविक

परमपवित्र पूज्यपाद बाबा राघवदासजीकी प्रथम पुण्यतिथीके अवसरपर मेरे सुपुत्र श्री. विद्याधर गोखलेने राघवदासजीका सु-चरित्र महाराष्ट्रके सामने सादर किया। विचक्षण सम्पादकोंने उसकी प्रशंसा की और बालबच्चोंके सामने एक आदर्श चरित्र वह माना गया। राघवदासजीकी यही वाङ्मयी पूजा आपकी जन्मभूमीमें हुअी। आपकी कर्मभूमि तथा आपको जाननेवाले भारतीयोंको आपकी वाङ्मयी पूजा इस पुस्तकके रूपमें मैं सादर करता हूँ। क्यों कि इसकी जरूरत बतलाई गई है। इस वाङ्मयी पूजामें जो अच्छा है वह सब मेरे सुपुत्र विद्याधर और दूसरे सज्जनोंका है, जिनसे राघवदासजीका चरित्र मेरे समझमें आया। तो मैं इन सब उपकार–कर्ताओंका कृतज्ञ हूँ।

– पु. पां. गोखले

अनुक्रमणिका

१) सादर समर्पण ...

२) धन्यवाद ...

३) प्रास्ताविक ...

४) अनुक्रमणिका ...

५) बाबा राघवदास चरित्र ... १ से ३१

६) बाबा राघवदास चरित्रके पहेलू ... ३२ से ८७

७) बाबा राघवदासजीकी विचारधाराका कुछ अव्वल परिचय ... ८८ से १०९

८) बाबा राघवदासजीकी कई संस्थाएँ ... ११० से ११८

९) जीवनीकी तालिका ... ११९ से १२०

बाबा राघवदास

चरित्र

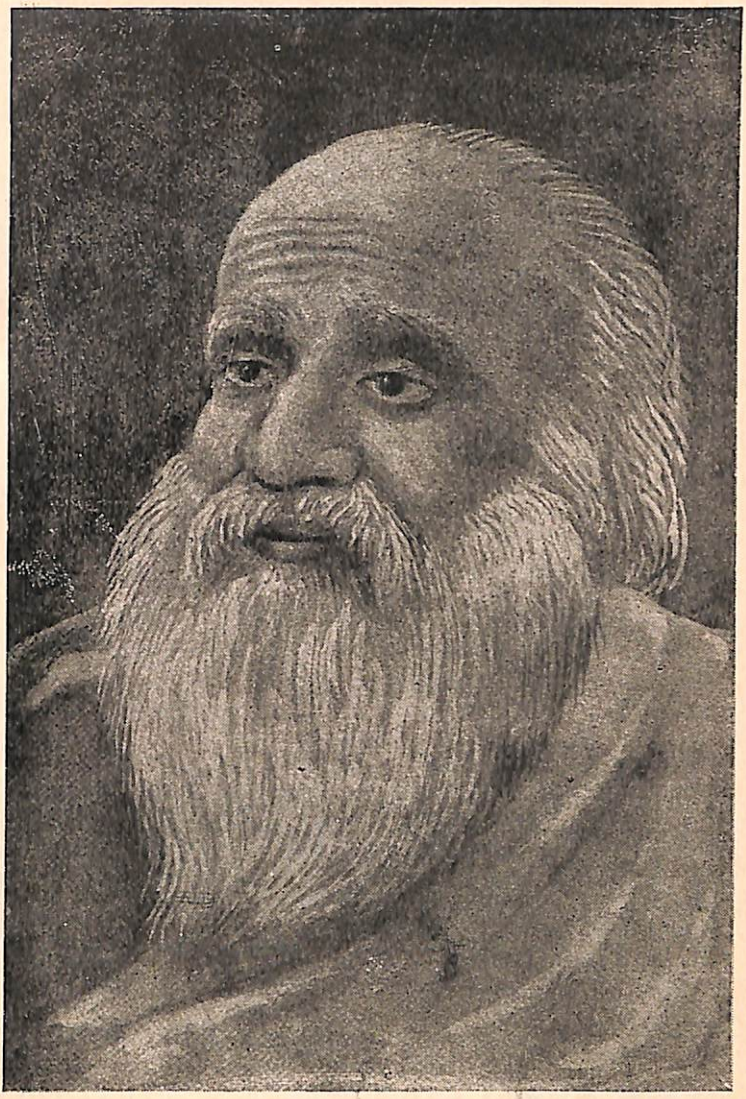

परमहंस बाबा राघवदास

आ. विनोबा और बाबाजी

★

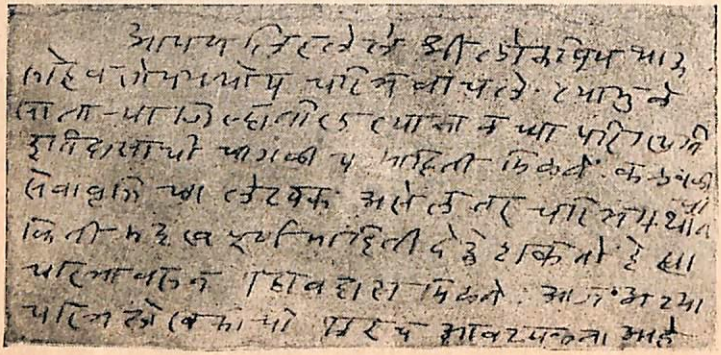

बाबा राघवदासजीका हस्ताक्षर

* * *

" जल जाअे अगर आगमें चलतेहि रहेंगे ।
गम जिसने दिअे है वोहि गम दूर करेगा ।।
दुनियामें हम आये हैं, तो जीनाहि पडेगा ।।"

संसारका दण्डक यही है । उसे मानकर जो कर्तव्य और कर्तृत्व करते हैं, वे जीते हैं । जिनकी जीवनी समाजकी संजीवनी बन जाती है, उनके शरीर मौतकी शिकार हो तो जाते हैं, मगर उनका नाम कर्तव्यसे और कर्तृत्वसे अमर हो जाता है । नामके अमरनाथ मर जाते हैं, मगर कर्तव्य और कर्तृत्वके लिये मौतकी शिकार बननेवाले धीरवीर (नामसे शालिग्राम क्यों न हो ?) कालखण्डके ऊपर अपने नामका शिक्कामोर्तब लगाकर अमर हो जाते हैं । महाराष्ट्रके सन्त-शिरोमणि समर्थ रामदास कह रहे हैं कि--

" मर जाअे पर विद्यमान भी होअे कीरतसे ।"

आपने वही किया । आप कर्मयोगके भाष्यकार और कर्ता प्रचारक सन्त थे । आप न केवल बुद्धिवादी या न केवल भावनाशील भक्त थे । आप थे प्रत्ययवादी सेवाव्रती । जिसका अनुभव आपने किया उसीका उपदेश आप करते थे और लोगोंको सिखाते थे । उनको जो प्रत्यय न हो, उसीको लोग न अपनाअें । सोचकर बोलना और चिकित्सासे चलना, जिससे संतप्त शान्तदान्त हो जाअें । वही था समर्थ रामदासजीका सूत्र दैनंदिन जीवनमें । आप थे छत्रपती श्री शिवाजीमहाराजके समकालीन और सहाय्यक मार्गदर्शक । आपको इतिहास " राष्ट्रगुरु " कह रहा है ।

बीसवी सदीमें राष्ट्रगुरु रामदासजीका एक सच्चा अनुयायी और भक्त निर्माण हुआ । सच्चा भक्त और अनुयायी वह है जो अपनी देवताकी पूजा अनुकरणसे करता है । रामदासजीका कहा था कि--

"सामर्थ्य है आन्दोलनमें
उसीका जो कर्ता है ।
पर है जरूरी सहारेकी
भगवानके जो आनंद है ॥"

काम छोटे हों या मोटे हों, शुरूके वख्त भगवानका स्मरण करके चित्तशुद्धि लेनेवाला रामदासजीका अनुयायी बाबा राघवदास थे ।

बाबा राघवदास ! हाँ ! नंगे पाव, नंगे शिर, खादीकी मोटी धोती, एक हलकी चादर, खसमसी दाढी, माथेसे चूता पसीना, आँखोंमें गहरी करुणा और ओठोंपर उभर कर न भी उभर पार ही मुस्कान, यही रूप था बाबा राघवदासजीका १९२१ से । दक्षिणसे उत्तरमें जो महाराष्ट्रीय आये, उनमेंसे अनेकोंने देशका मुख उज्ज्वल किया है । पर राघवदासजीमें जो बहुमुखी प्रतिभा एवं कार्यशक्ति देखी गयी वह और किसीमें क्वचित् । वैष्णव (जन्मतः) होनेके कारण संतत्वकी ओर आप अधिक झुके और सामंजस्य-प्रधान रहे । " "नरसेया" के शब्दोंमें-

"वैष्णवजन तो तेने कहिये
जो पीड पराई जाने रे ॥
परदुःखे उपकार करे तो
मन अभिमान न आणे रे ॥ "

अिसीलिये कोई सेवाक्षेत्र बाबा राघवदासजीसे अछूत न था । आपके अंतःकरणसे करुणाकी वह धारा फूटी थी, जो व्यक्तिके समष्टि हो जानेपर फुटती है । कोटि-कोटि दरिद्र जनताहि आपकी देवता थी । यह विश्व आपके लिये प्रभुरुप था ।

तो कहांके थे बाबा राघवदासजी ? पूनाके एक ऐसे वैभवशाली, शीलसमृद्ध, मांध्वसांप्रदायी वैष्णव ब्राह्मण-परिवारमें आप पैदा हुअे थे, जिसने उत्तर पेशवाओंकी एक समय लाखों रुपयोंसे सहायता की थी । "मासानां मार्गशीर्ष" के दत्तजयन्तिके रोज पूनाके बुधवार महुलेके क्रमांक २९८ में जो लडका पैदा हुआ, वही शके १८७९ का पाच्छापूरकर थे बाबा राघवदासजी । आपकी जन्मतारीख थी १२ दिजंबर १८९६ ईसवी । आपके तीर्थरूप थे शेषो दामोदर और माताजी थी श्री सौभाग्यवती यशोदादेवी । उन दोनोंके पुत्ररत्नका शुभ नाम रख्खा गया राघवेन्द्र । राघवेन्द्रने बचपनके दिन राजकुमारके माफक बींते । माताजीका प्यार उसपर बहुत था । माताजी ईश्वरभक्त और गरीबोंके लिये सब कुछ दे देनेवाली थी । वह अपने पाँच पुत्रों और तीन पुत्रिओंको सरलतासे सब कुछ दे रही । पिताजीकी शिक्षा और शिस्त बच्चे लोगोंकी जीवनिका पावन कर रही थी । वे दूसरे की अनाजकी लाचारी कभी न सह ले । पाच्छापूर-करोंकी जरूर इतनीही वंशवेल ऐसी है ।

कृष्ण
|
दामोदर
|

शेषो (पत्नी यशोदा)
- —नारायण (पत्नी-मनोरमा)
- —तारा (येवलेकर)
- —श्रीनिवास (पत्नी-यमुना)
- —शकुंतला (कुलकर्णी)
- —व्यंकटेश
- **—राघवेंद्र**
- —यादवेंद्र
- —पद्मिनी

वादिराज
- —विष्णू
- —शांताराम
- —माधव
- —हरिणी

नसीबका "चक्रनेमिक्रम" कहाँ नहीं है ? वे दिन प्लेग–रूप बीमारीके सहाय्यक दोस्त थे। ओहो ! यह मृत्युका एक नग्न तांडव था। अपने क्रूर अट्टाहाससे दिग्दिगंतको कंपायमान करती हुअी मृत्यु कालभैरवके समान धूम रही थी। चतुर्दिक् हाहाःकार मचा था। ग्राम और नगर जनशून्य रहा करते थे। जो कोई घरमें ठहरा, उसीको मरे हुअे चुहेकी गंदकी ठहर नहीं देती थी। सरकारभी मना करती थी। मौतकी शिकार होनेवालोंका दहनभी एक मुष्कील बात हो रही थी। परिवारके दस आदमीओंमें एकाध जिता मिलता था। १८९७ से यही मामला चल रहा था।

राघवेंद्र का बडा भाई और शेषोजीका दूसरा सुपुत्र श्रीनिवास १९०० में परलोक गुजर रहा। एकही बरस पहले उसका ब्याह हो चुका था। शेषोजीके दूसरे जमाई बाबा कुलकर्णीने सांत्वन करते करते बिनती की कि वातावरणकी पलटी साध्य करनेकेलिये पाच्छापूरकर परिवार कन्हाड आये। शेषोजी परिवार लेकर कन्हाड आये। सुपुत्री सौभाग्यवती शकुन्तलाके यहाँ ठहरे। प्लेग क्या कन्हाडको डरता था। वहाँ भी उसने आक्रमण किया। १९०१ में उसने शेषोजीको शिकार की। जीवनके आधार पतिदेवका परलोकवास सती यशोदा आसानीसे कैसी सहन करती थी ? अपने सब पुण्याचरणका पता भी परमेश्वरके पास नहीं, यह देखकर दुःखभारसे ग्रस्तसंतप्त हो गई देवी यशोदा।

मगर "लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः।" सोच कर कालगांवमें, जो कन्हाडसे चौदह पंधरह मीलपर है, अपनी मैकाके यहाँ यशोदामाता चल गई। "काले"जीके परिवारके पडोसमें पाच्छापूरकरोंका परिवार अपने दिन काटने लगा। दो साल ऐसे वैसेही बीत गये। तो भी दुर्दैव वहाँ पाच्छापूरकरोंका पीछा कर रहा। १९०४ में जब भारतपर लॉर्ड कर्झनसाहबका जुलुम अतीव हो रहा था तब प्लेगका नंगा नाच भी सहकार दे रहा था। उसी

सालमें एक दिन कालगांवमें प्लेगनें यशोदामाता, बडे भाई नारायण और व्यंकटेश, छोटा भाई यादवेन्द्र और छोटी बहन पद्मिनी छीन लीं राघवेन्द्रसे । एक देहातके घरमें प्लेगके तांडवनृत्यसे स्तंभित राघवेन्द्र, जो खाली सात बरसोंका था, क्या करे ? राघवेन्द्रकी बडी भाबी मनोरमा (नारायण) और दूसरी भाबी यमुना (श्रीनिवास) जो यथानुक्रम १९५२ और १९६० तक जीवित थीं, उस समय राघवेंद्रके साथ कालगांवमें नहीं थीं । अपने अपने पतिदेवके साथ रहनेवाली बहनें तारा (येवलेकर) और शकुन्तला (कुलकर्णी) १९०६ और १९०७ तक थीं । १९०४ में वेही राघवेन्द्रका निश्चित आसरा था ।

सात दिनोंके भीतर प्लेगने किये हुअे हमलेसे बालक राघवेन्द्र अनाथ हो गया । परिणामतः देख पडा कि एक संध्याको कालगांवके एक घरमें एक दीपक टिमटिमा रहा था । मानो, असह वेदनासे रुदन कर रहा हो और रोते रोते मूक बना हो । इस घटनाकी गहरी चोट राघवेंद्रपर पडी । दो दिन वैसेही बीते । अवसरसे कऱ्हाडमें खबर आई । राघवेन्द्रके बहनोई व्यंकटेश विठ्ठल तथा बाबा कुलकर्णी कऱ्हाडसे उपाध्यायजी भीमाचार्य केंच के साथ कालगांव चले आये । वहाँके भीषण दृश्य देखकर तप्त–तैलमें भक्त प्रल्हादकी जो अवस्था हुअी थी, उसकी याद उनको आई । राघवेन्द्रको–बहनोईजीको देखकर गजेन्द्रमोक्षकी याद आयी । वहाँके शवोंके दहनविधीकी व्यवस्था करके, बाबा कुलकर्णी और उपाध्यायजी राघवेन्द्रको लेकर कऱ्हाडमें वापिस आये ।

नये सालके शुरूसे राघवेंद्र अपने घरमें पूना आया । वहाँ १९०५ में राघवेंद्रका उपनयनसंस्कार भलेही ठाटमाटसे हुआ । पूना शिक्षा, नवजीवन ओर स्वातंत्र्यलालसाके उत्थान का केन्द्र होते हुअे भी, राघवेंद्र अपनी शिस्तशिक्षाके लिये फेर कऱ्हाडमें आया । कऱ्हाड नगरपालिकाकी प्राथमिक शालामें उसका नाम दाखल हुआ । उसी समय उसके संवगडी वासुदेवराव काळें, बिनायक घळसासी और आत्माराम बापूजी पाठक थे । वे

भविष्यमें यशस्वी और स्वनामधन्य प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षक हुअे। शालाके वर्गमें राघवेंद्र पहला और आत्माराम पाठक दूसरा क्रमांक ना छोडते थे। तो भी राघवेंद्र जितनी दिल-खुलास हँसी मित्रमेलामें करे उतनाही मौन कक्षाक्षेत्रमें रखा रहा था। भावनाशील होने के कारण उसकी आँखोंसे आँसू बहा करते थे जभी कोई उसे कमनसीब गिने। राघवेन्द्रके जन्मके साथ देशमें प्लेग आया, इसकेवास्ते उसे कभी कभी गाली भी मिली कि "वह फीके (श्वेत याने अशुभ) पाँवका है।" इन शब्दोंको सुनकर या सुनतेही राघवेन्द्र रोया करता था। शालाके वर्गमें अभागसा बैठकर चलता था। तो भी उसकी ईश्वरनिष्ठा अजब थी। वह भजन बहुत प्यार करता था। १९०८-९ में जब राघवेंद्र पाँचवी और छव्वी कक्षामें था, पाँचसे दस मिनिट तक वह अपना देहभान भूल जाता था। विशेषकर यह अवस्था कऱ्हाडके श्रीकृष्णामाईके पावन तीरपर संध्याके समय देखी जाती थी। १९१३ में जब एकबार बम्बईसे स्वामी श्री विवेकानन्दजीका वांग्मय पढकर राघवेन्द्र कऱ्हाड आया था रिश्तेदारोंको मिलनेके लिये, तब भजन सुनाते सुनाते श्रीकृष्णा-कुकुद्मती-संगमपर वह अपना देहभान एक घण्टेसेही जादह भूल गया था। साथ साथ महाराष्ट्रीय सन्तमहन्तोंके वचन विवरण गङ्गाप्रवाहकी तरह अस्खलित वाणीसे कर रहा था। यही भावशीलता राघवेन्द्रमें अव्वलसे आखीरतक थी जैसी १९०६ में थी।

१९०६ में स्वराज्य-स्वदेशी-बहिष्कार-राष्ट्रीय शिक्षा नामकी चतुःसूत्रीके और साथ साथ भारतीय असन्तोषके जनक लोकमान्य तिलक और सशस्त्र तथा सशास्त्र राजकीय क्रान्ति-गाथाके मराठी भाष्यकार प्राध्यापक शिवराम महादेव परांजपे कऱ्हाडमें "स्वदेशी" का प्रचार कर गये। तिलकजी "केसरी" के और परांजपेजी "काल" के समर्थ सम्पादक थे। जनजागरमें दोनो अखबारोंका कार्य अतुलनीय हो रहा था। उनसे स्फूर्ति लेकर कऱ्हाडके युवक कृष्णाजी मारुती कळम्बे, बालकृष्ण भाऊ

जोशी, बाबूरावजी अंगापूरकर क्रान्तिके उपासक बन रहे थे। राघवेन्द्र पाच्छापूरकर जिस शुक्रवार गल्लीमें रहा करता था, उसके रहिवासी थे कळम्बे और अंगापूरकर। स्वदेशीके बाबतमें अंगापूरकी एक कापड दुकान थी और कुछ "माग" भी थे। जब ११ फरवरी १९०६ रोज लोकमान्य तिलक और प्रा. परांजपे आये, तब राजकीय सन्तोंके माफक आपका सन्मान-सत्कार हुआ। आपके व्याख्यान और उसे मिली हुअी नवयुवकोंकी सहभावना, परिणामतः जनतामें देख पडा हुआ उत्थान इतना जोरदार था कि उनका असर उदयोन्मुख विद्यार्थिओंपर अमर्याद हो रहा। श्रीकृष्णामाईके स्वतंत्र और शान्तदान्त पानीमें डूबने-कूदनेवालों भावशील छात्रोंपर स्वदेशी-स्वराज्यकी कल्पना और कामना जीवनकी एक प्रणाली हुअी। राघवेन्द्र उसे अपवाद कैसा होगा? उसकी बडी बहन सौभाग्यवती तारा येवलेकर बम्बईमें मृत्युकी शिकार हो चुकी इसी सालमें। तो भी राघवेन्द्रका स्वदेशी-चिन्तन कम नहीं हुआ।

फल यह हुआ कि लोकमान्य बाल गंगांधर तिलकजीने उन्नीसवे शताब्दिके छल्ले दशकमें जो श्रीगणेशोत्सव तथा श्रीशिवाजी-उत्सवकी प्रथा शुरू की थी, उसका प्रबंध कऱ्हाडमें शुरू हुआ। श्रीगणेशजी "इष्टकामप्रसिध्द्यर्थम्" भारतमें आर्यलोग पूजते आये हैं। १८५७ से भारतीय स्वातंत्र्यके बारेमें प्रयत्न करनेवालों और करानेवालोंका विश्वास था कि "भगवानके अधिष्ठान" बिगर यशःप्राप्ति नहीं। लोकशाही स्वराज्यकी यह अपरिहार्य जरूरत है कि जाणकार और अजाणकार एकत्र मिलें और बहु-मतका संचालन ज्ञानमय हो। श्रीगणेशजी विद्या याने जीवनके शास्त्रका देवता है। इसीवास्ते सामाजिक उत्थान ज्ञानमय हो और उसे आध्यात्मकी बैठक मिले, और सुशिक्षित अशिक्षितोंसे अलग-बिलग न हो जायें, यह उद्दिष्ट सामने रखकर तिलकजीने सार्वजनिक गणेशोत्सवकी प्रथा शुरू की थी। श्रीछत्रपति शिवाजी-महाराजका उत्सव भी हेतुपुरःसर शुरू हुआ था। एक तो आप

स्वराज्यसंस्थापक थे । आपका मंत्रिमण्डल लोकशाहीसा प्रातिनिधिक था । सब धर्मिओंको और सांप्रदाअिओंको महाराज सन्तानसे मानते थे । स्त्री–दाक्षिण्य आपका सहजस्वभाव था । पंडितोंका परामर्ष आप लेते थे और सन्तमहन्तोंकी पूजा करते थे । जहाँ कहाँ अन्याय नजर आया, वहाँ अपनी सब करामत काममें लाकर जनताका कल्याण मात्र आप साध्य करते थे। कर्तृत्ववन्त होकरभी आप शीलवन्त और विनयवन्त थे । आपका उदाहरण नेताओंको और जनसामान्यको आदर्श था । नये लोकशाही जमानेभी उसी आदर्शके अनुयायी होकर जनता पग उठाये, यह था ध्येय लोकमान्य तिलकजीका श्रीशिवाजीउत्सवकी प्रथामें । साथ साथ ऐतिहासिक उत्सवसे लोगोंमें कर्तृत्वका आत्मविश्वास भी बढ जाता है । यह सब देखकर जहाँ वहाँ श्रीगणेशजीका और श्रीशिवाजीका उत्सव जनजागरणपर लक्ष केंद्रीभूत करके जाणकार नेतागण करने लगे । ब्रिटिश सरकारने इसी उत्थानमें देखा कि अपना सिंहासन और इज्जत हिलानेका सामर्थ्य जनजागरणसे निर्माण होनेवाला है । इसीलिये अंग्रेज सरकारकी नाराजगीसे उत्सवबन्दी करनेका हुक्म जारी हुआ । फिरभी राघवेन्द्रने कऱ्हाडके शुक्रवार मोहल्लेके श्री कळम्बे और अंगापूरकरकी साथ लेकर १९०६ से १९०९ तक वहाँके श्रीराम–मंदिरमें श्रीशिवाजीउत्सवका प्रबंध उत्साहसे किया ही। पुलीसने उत्सव करनेवालोंके नामपता चलाया तो राघवेंद्रने बेडर कबूल किया कि " मैं उत्सवका संचालक हूँ ।" सरकारकी आँखें संतप्त हुअीं । तो १९०७ में दे. लाला लजपतरायको देश निकाला आ था । राघवेन्द्रने अपनी गल्लीके श्रीराम–मंदिरमें अपने एक शक्षकके प्रोत्साहनसे सभा ली । उसी छात्रोंकी सभामें विदेशी चिनी न खानेका व्रत राघवेन्द्रने लिया । इसका पडसाद बाबा राघवदासजीके एक खतमें ऐसा आ चुका है:—

" मैं बच्चा था । १९०७ की बात है । ११ वर्ष की आयु थी । श्रद्धेय लालाजीको देश निकाला हुआ था । हमारे

मास्टर साहबने सभा बुलाई थी। इसमें हम लोगोंने विदेशी चिनी न खानेका संकल्प किया था। दीवालीके दिन थे। महाराष्ट्रमें दीवाली सबसे बडा त्योहार होता है। मैंने बहनसे आकर कहा कि मैं विदेशी चिनी नहीं खाऊंगा। बहन बडे परेशानीमें पडी। उस समय मेरी बहनही सब कुछ थी। उसने माँकी तरह मुझे गोदमें लिया। समझाया। पर वह न समझी। तब मैंने आँखोंमें आँसू लाकर कहा– " प्यारी बहन, तुमही तो कहती हो न कि हमारे पूज्य पितांजी दस वर्षके आयुमें पराया अन्न न खानेका व्रत किये थे। और माताजी जब किसी बहन को बच्चा पैदा होता था तो उसको और उसके बच्चेको बचानेके लिये रातबेरात उसके घर जाती थी और वहाँ पानीतक नहीं पीती थी। तब बहन, तुमहीं बताओं तुम मेरा व्रत क्योंकर तोड रही हो? क्यों कि मैं छोटा हूँ ? बहन अपनेको सम्भाल नहीं सकी। उसने मेरा चुम्मा लेकर कहा– अब नहीं कहूंगी। अब मै तेरेलिये गुडका पक्वान्न बनाऊंगी।" – राघवदास.

(क्रांतिकुमार तिवारीको, बछरा जि. चांदासे)

इस प्रसंगके बाद थोडेही अवसरमें राघवेंद्रकी बहन शकुंतलादेवी कुलकर्णी प्लेगके कारण परलोक सुधार रही। तब श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके मुख्य मठसे पवित्र हुअे चाफळ ग्राममें राघवेंद्र अपनी मौसीके यहाँ ठहरा। उसी देशपाण्डे परिवारमें रामदास्य और रामदासस्वामीजीकी राष्ट्रीय उत्थापनकी संघटनाचातुरी राघवेंद्रको मालूम हुअी, जिससे वह दास–बोधादि रामदासके ग्रंथोंका नियमित पाठक हो चुका। आस्ते आस्ते राघवेंद्र परमार्थमे रस ले रहा। इतनाही नहीं, राघवेंद्र रामदासके तरह खेल–कूदमें और कुछ अलौकिक करनेमें आगे जाना चाहा। राघवेन्द्रके बहनोई व्यंकटेशबाबा कुलकर्णी लोगोंके विश्वास–निधान मार्गदर्शक और निःपक्षपाती लवादपंच थे। राघवेंद्रके सामने वह भी व्यवहारशुद्ध आदर्श था।

सोच सोच कर राघवेन्द्र फेर १९०८ की शुरूसे कन्हाडमें अपना अभ्यास कर रहा था। तो उसी सालके जुलाईमें लोकमान्य तिलक मण्डाले भेजे गये। खबर लगतेही जहाँ वहाँ हडताल हो गई। बम्बईके मजदूरोंने तथा स्थानस्थानके विद्यार्थिओंने ब्रिटिशके धोरणपर धिक्कार बरस दिया। वह था युगपलटीका प्रसादचिन्ह। उसी समय पाठशालाओंका जो हडताल कन्हाडमें हुआ, उसका नेता था राघवेन्द्र पाच्छापूरकर।

समय अपनी बेढब चालसे चलता रहा। स्वदेशीका आन्दोलन तेजसे चला। साथ साथ अंग्रेजी राज्यकी उलथीपुलथी करनेके लिये सशस्त्र क्रान्तिका प्रचार भी जोरसे चला। स्वाभिमान और स्वदेशप्रेम दबानेके लिये अधिकाधिक गरम होकर सरकारने दमनशाहीका अवलंब किया। तो भारतीय युवक बिगड गये। २२ दसंबर १९०९ रोज नाशिकके कलेक्टर जॉन्सनकी हत्या हुअी, जिससे सारा देश भूकम्पसे हिला रहा। स्वदेशभक्तिके पाठ देनेवाली संस्थाअें और शिक्षक सरकारके क्रोधसे लुप्तप्राय हो बैठे। कन्हाडके अंगापूरकर पुलीसके दमनकी शिकार हो चुके। साताराकी जिल्हा-सभा गरमनरम राजकीय दलोंकी एकता करनेकी चिन्ता कर रही। १९१० में जॅक्सनके खूनी अनन्तको फांशी दे दिया। वह निजानंदसे गया। सातारा जिलेके प्राथमिक शिक्षक कळम्बे, नारायणराव भावे प्रभृति वनवासी हुअे। ऐसी स्थितीमें १९११ दसंबर रोज दिल्ली में पंचम जॉर्ज बादशहाका राज्यारोहण समारोह हुआ। जब ये सब बातें चलती थी, राघवेंद्र अस्वस्थ था। क्यों कि एक तो वह बचपनसे कुछ कर नहीं सका। उसे अपना अभ्यास पूरा करना था। वह जानता था कि अजाण आन्दोलन खडकालाके ऊपरका बीज है। फिर, उसका आश्रयस्थान कन्हाडमें जो उसके बहनोईका था, वह व्यंकटेश बाबा कुलकर्णी इहलोकसे चल गये थे। राघवेंद्र प्राथमिक शिक्षाकी अन्तीम परीक्षा उत्तीर्ण होनेपर आगे क्या करना, यही सोच रहा था। प्रकाश मिला "चलो बम्बई।"

कऱ्हाडमें उन दिनोंमें अंग्रेजी पढनेकी व्यवस्था अच्छी न थी । अंग्रेजी पढनेकी अभिलाषा पुरी करनेके लिये. राघवेंद्र अपने दूसरे बहनोई पाण्डुरंग केशव येवलेकरजीके यहाँ बम्बईमें गया । जाते जाते उसने अपना भांजा (बहेन शकुन्तलादेवी कुलकर्णीका पुत्र) विठ्ठल तथा राजारामको गोदमें लिया और अपनी टोपी भांजेके सिरपर डालकर अश्रुस्रोतसे औक्षण कर रहा ॥ उस अश्रु-स्रोतमें कृतज्ञता था बहन और बहनोओके स्मरणपें । वत्सल आशीश भी थे भांजेपर । अपनी बहनकी सुमित्रा श्रीमती कुमठे-करजीके यहाँ राघवेन्द्रका वह हृदयस्पर्शी औक्षण देखकर राघवेंद्रके भाईसमान सब दोस्तोंके हृदय भर आये । सबने माना कि राघवेंद्र सुदूर चल रहा है और उसकी भेंट दुर्मिळसी हो जानेवाली है । कतिपय दोस्तोंका अनुभवही लगभग वहांसे पचास वर्षोंमें वही है । कितनेको मालूम नहीं हुआ कि उत्तर-प्रदेशके "बाबा राघवदास" महाराष्ट्रका राघवेन्द्र पाच्छापूरकर था । राघवेन्द्रकी प्रसिद्धि-विन्मुखता, दोस्तोंकी राजकारण-समाजकारणसे अलिप्तता और कालमहती उस परिणामकी जिम्मेदारी ले सकती हैं । पर जब औक्षण हुआ तबकी भावना यह थी कि दूरीसे राघवेन्द्र अपने भांजेकोभी मिलनेका मौका दूर रहे । विरह सदाकेलिय बाँका रहता है । फिरभी राघवेंद्र बंबईमें जानेवाला था, जहाँ उसकी बडी बहनकी जगह दूसरी गृहलक्ष्मी आयी थी । उसे राघवेंद्र अपनी बहन मानकर उसका सन्मान करनेका निश्चय राघवेंद्र कर रहा था । जब राघवेन्द्र बम्बई गया, तब नया सालका अभ्यासक्रम शुरू होकर बहुत दिन बीत गये थे । अंग्रेजी पाठशालामें प्रवेश मुष्किल था । इसलिये एक मासमें तीन कक्षाका अंग्रेजी विषयका अभ्यास श्री भानप गुरुजीकी देखभालमें पूरा करके राघवेन्द्रने परीक्षा दी और उत्कृष्ट दर्जेके गुण प्राप्त कर अगली कक्षामें प्रवेश पाया । राघवेंद्रकी बुद्धि ऐसी तेज थी । बम्बईमे राघवेंद्र १९१३ ईसवी तक अंग्रेजी पढ रहा ।

उस समय, खाली बम्बईमें नहीं, अखिल भारतमें स्वामी विवेकानन्दजीके ग्रंथोंसे युवक प्रभावित थे। "सब संसारही हमारा गृह है"। यह भारतीय संस्कृतीकी शिक्षा शिकागोकी विश्वधर्म-परिषद (१८९३) में विशद करनेवाले। जहाँ अमेरिकन और युरोपियन युवकोंका और विचारवन्त भाईबहनोंका आकर्षण थे, वहाँ भारतीय युवकोंका स्फूर्तिस्थान आप बन रहे, इसमें आचरज क्या? आपके वाङ्मयकी पढाईसे राघवेन्द्रके सोचमें आया कि जो मैं रामदासस्वामीके कार्यभूमीमें अपनी संस्कार-परंपरा बढा रहा हूँ, वह मैं विवेकानंदका अनुयायीता क्यों न करूँ? सहिष्णुता, समन्वयपटुता और अुन्ही दोनोंसे निर्माण होनेवाला बन्धुभाव फैलाते फैलाते अपनी जीवनिका स्वनामधन्य क्यों न होये? तो विवेकानंदके धर्तीसे जीवन व्यतीत करुंगा, ऐसी आकांक्षा राघवेन्द्रमें निर्माण हुअी। राघवेन्द्र रात-बेरात बेचैन था। सोच सोचकर एक दिन बम्बई छोडनेका और विवेकानंदजीको जैसे गुरुराज रामकृष्ण परमहंस मिले, वैसेही पूज्यपाद धुँडनेका राघवेंद्रने निश्चय किया। निश्चयकी मातबरी मुकर करनेकेलिये अवधिकी आवश्यकता थी जैसी हितचिंतकोंकी सम्मतिकी भी। "सर्वेषामविरोधेन" कार्य करना यही भारतीय संस्कृतिका, हो सके तो, लक्ष्य है। इसीलिये राघवेंद्र कऱ्हाड-चाफळ-पूनाके रिस्तेदारोंसे और साथी-सहयोगी-स्नेहिओंसे मिलकर, उनसे बातचीत और सलाह कर, और कौन जाने फेर उनके दर्शनोंका लाभ है या नहीं इसी भावनासे उनका मनःपूत दर्शन लेकर, राघवेंद्र हिमालयमें तपश्चर्या और गुरुपादकी खोज करनेके इरादेसे बम्बई वापिस आया। थोडेही दिनोंमें राघवेंद्रने अपना निश्चय अमलमें लाया।

राघवेन्द्र जब बम्बईसे गुपचुप चला तो सिरपर कफन बांधकर चला। ११ फरवरी १९१३ रोज अनंतके पथपर वह चल रहा था। हरिद्वार, हृषिकेश, प्रयाग, काशी करके गाझीपूर, बालिया और छपरासे वह बरहज आया। क्यों कि प्रयागके

समीप हडिया ग्राममें पहुँचनेपर राघवेन्द्र की "एकला चलो रे" अवस्थाकी समाप्ति हुअी थी। वहाँ बरहज आश्रमके सन्त श्री अनंत महाप्रभुकी योगतपस्याका पता लगा था। आपके दर्शनका ध्यास अब राघवेंद्रका साथी बना था। घूमते घूमते बरहजकी साधनाभूमीमें प्रवेश करनेका राघवेंद्रने निश्चय किया था। कारण यात्रा करते करते उसे कतिपय संतो और महात्माओंसे उपदेश तो मिल रहा था, मगर शान्ति नहीं मिली थी, पूज्यपाद गुरु-राजसे मिलनेकी प्यास जैसी कि वैसी थी।

वह १९१४ ईसवी साल था। स्वामी रामकृष्ण परमहंस जैसे सफल सन्तकी खोजमें भ्रमण करता हुआ एक अनोखा, प्रतिभाशाली युवक, जिसकी आत्मा अत्यंत असंतुष्ट, अस्वस्थ, संतप्त हो चुकी थी, श्रीयोगिराज अनन्त महाप्रभुकी तपोभूमीमें आ पहुँचा। लखनौमेंसे शहादत गंजमें शके १७७७ की अनन्त-चतुर्दशीको जन्मे हुअे योगिराज अनंत महाप्रभु महान् सन्त, साधक एवं उच्च कोटीके विद्वान थे। स्वनामधन्य पंडत सुनंदन वाजपेयीके आप सुपुत्र थे। उन्नावके पास इनामदार थे। आपका मकान बगीचेके अंदर मध्यवर्ती था। बचपनसे पिताजीका लालनपालन आपको नहीं मिला। तो भी आप स्वाभिमानी बहुत थे। रुई और घीका बेपार आपके परिवारमें चल आया था। संपन्नसा वह परिवार था। अपने बगीचेमेंसे एक मोर एक युरोपियनने मार डाला, यह सुनते-देखतेही अनन्त सुनंदन वाजपेयीने उसी युरोपियनको एक गोलीसे परलोक भेज दिया। सरकारका पीछा चुकानेके लिये आप भटक पडे। इतने शूर होकर भी आप वेदविद्या प्यार करते थे। काशीवास करके आपने संस्कृतकी पढाई अपनाई और वेदविद्या आत्मसात् की। श्री उमापतिजी आपके गुरुबन्धु थे। शैवों और वैष्णवोंके बीच एक दफा संघर्ष हो रहा था। वैष्णवोंकी ओरसे अनंत वाजपेयीने समर्थन किया। वाहवा हुअी। तो एक तपके अध्ययनके पश्चात् अनंतदेव वैष्णव धर्मका प्रचार कर रहे। १८५७ के स्वतंत्रताके सशस्त्र आन्दोलनमें आपने अपना हिस्सा लिया था और परमे-

श्वरके अधिष्ठानके अभावसे आन्दोलन यशस्वी न हुआ, यह देख-कर आप योगी बने। आपकी यौगिक क्रियाओंसे लोग इतने प्रभावित थे कि प्रोफेसर राममूर्ति जैसे कर्तबगार आपके अनुयायी बन गये थे। महाप्रभु समूचे भारतका भ्रमण करके बरहज आये और सदैव समाधिस्थ रहने लगे। आपको राघवेन्द्रने पहले देखते समय आपकी उम्र १३७ वर्षकी थी। जिस समय राघवेंद्र बरहज आश्रमपर पहुँचा, महाप्रभु ध्यानमग्न थे। कई दिनोंकी घोर तितिक्षाके बाद महाप्रभुका ध्यान उतरा और आपकी आँखोको निर्मल ज्योतिविशेषका अनुभव करतेही राघवेन्द्र चमक उठा। महाप्रभुको उसने एक सप्ताह देखा और " जिन खोजा तिन परजा " के अनुसार संतप्त आत्माको शान्ति प्रदान करनेके लिये शिष्यत्व स्वीकार कर लिया। महाप्रभुने भी किशोरावस्थाके युवकमें एक अद्‌भुत शक्ति देखी और पुत्रवत् स्नेह करने लगें। आपने आदेश दिया कि अपने अध्यात्म दीपसे घरघरमें दीपावली प्रगट कर दो। इसी सिलसिलेमें राघवेन्द्रको ज्वालापुर महा-विद्यालयकी अध्यापकी और संरक्षकता स्वीकार करनीं पडी। महाप्रभुने उसे वैष्णवी दीक्षा दी, भागवत पढाई (श्रीधरी टीकासहित) और साधक बनाया। आपने कुछ योगसाधनाभी बतलाई। राघवेंद्रपर जो जो संस्कार हुआ और उसने जानबूझकर पैदा किया, उसीका निष्ठावन्त परिपालन चल रहा था। इसी कारण चाफळके आसमंतमें जो रामभक्ती पैदा हुअी थी उसे उत्तर-प्रदेशके तुलसीदासजीके रामायणसे उजाला मिला।

दो या अढाई बरस कैसे चले गये, पता न था। चौदह बरसोंके वनवासकी स्मृति जागृत करनेवाली सुखद चित्रावली देखते देखते और उसपर बातें करते करते प्रभु रामचंद्र और सीतादेवीकी " अविदित-गत-यामा रात्रिरेव व्यरंसीत्।" यही अनुभव यहाँ आया। महाप्रभुके पथपर चलनेका प्रयत्न राघवेंद्र भावसर्वस्वसे कर रहा था। सिद्धीकी दूरी थी। तो १९१६ में महाप्रभूने स्वर्गारोहण किया। वह दिन (विक्रमसंवत्) कार्तिक

वद्य व्दितीयाका था । राघवेंद्र तव हरिद्वारमें था । खबर मिलतेही राघवेंद्र बरहज आया । उसे गुम्फामें जाना पडा । चार वर्षोंतक इस संन्यासीने साधना की । तपका प्रथम खण्ड जो लगभग तीन वर्षका रहा, शीशमकी पत्ती और मठ्ठापर उसने व्यतीत कर दिया । गुम्फाका आश्रय लेकर जनसंपर्कसे विलग हो गया राघवेन्द्र । उसका भौतिक शरीर क्षीण होने लगा । परंतु उसकी आत्माका परिष्कार–प्रारंभ हो गया । राघवेन्द्रने अनुभव किया कि आध्यात्मिक ग्रंथोंका अवलोकन उलझन दूर करता है, मार्ग प्रशस्त करता है । इससे आत्माको बल मिलता है । मस्तिष्कको पुष्ट खुराक मिलती है । क्यों कि इनमें ईश्वर, ऋषि और सन्तोंकी वाणियाँ हैं । उनसे मानवीय गुणोंका विकास होगा ।

परिणामतः राघवेंद्र पूर्ण सन्त होकर सामाजिक जीवनमें जनताजनार्दनकी सेवाकेलिये प्रविष्ट हुआ । "हमें घर घर जाना है । सबको स्वतंत्रताके बारेमें संदेश देना है और उन्हे मोह और आलसकी नींदसे जगाना है ।" यह थी राघवेंद्रकी सद्भावना । रामकृष्ण परमहंसकी शिक्षाओंसे, लोकमान्य तिलकजीकें गीतारहस्यसे और सन्तमहन्तोंकी वाणीओंसे राघवेंद्रने महसूस किया कि जीवनको ज्योतिर्मय बनाएविना उसका उद्धार संभव नहीं ।

१९१७ में राघवेन्द्रजी गुम्फामें तो रहते ही थे । पर दो घण्टेकेलिये आप गुम्फासे बाहर निकलकर खुदने संस्थापित परमहंस आश्रमवासी छात्रोंको कुछ खिलाया करते थे। राघवेंद्रजी युवक थे । संस्कृत पाठशालाके छोत्रोंसे आप गेंद खेलते थे मगर बिनाढंगके । आप अपनेको बाल भगवान्का पुजारी मानते थे और अन्ततक मानते रहें । १९१८ में राघवेंद्रजीनें कांगडीके स्वामी श्रद्धानंदजीके गुरुकुलके ढंगपर ब्रह्मचर्याश्रम शुरू किया । तो भी १९२० तक आपनें गुम्फामे नियमित जीवनकी संतत साधना की ।

साधना करते करतेही पराधीन भारतकी विषम समस्या–ओंने करुणार्द्र साधक योगोंसे हृदयको विचलित कर दिया ।

विद्यार्थीदशासे राघवेंद्रजी ब्रिटिश शासनसे घृणा करते थे। लोकमान्य तिलकजीने मण्डालेसे वापिस आनेके बाद जागतिक महायुद्धके निमित्त लष्कर–भरतीका आन्दोलन चलाया था। हेतुतः भारतीय जनताको १८५७ के उत्थानके अनन्तर निशस्त्र कियाथा ब्रिटिश सरकारने। पहले जागतिक महायुद्धमें जर्मन शूरोंको हटाने के लिये भारतीय युवकोंकी जरूरी थी अंग्रजी साम्राज्यको। उसने आवाहन किया था " भारत–रक्षक–दल " नामसे। लोकमान्य तिलकने देखा था कि वह एक अमूल्य संधि है लष्करी शिक्षा भारतीय युवकोंको मिलनेकी। फेर स्वराज्यके हक संपादन करनेके लिये आपने सवाल भी किया था कि " कहाँ है वह भारत जिसका रक्षण भारतीय सैनिकदल करे ? " लोकमान्य तिलकजीकी इस " होमरूल " याने " स्वराज्य " के आन्दोलनके समय राघवेंद्रजी तपस्या-तितीक्षामें गुञ्ज रहे थे। पर जब १९१९ के जालियन–वाना बागके हत्त्याकाण्डने राघवेंद्रजीको विचलित कर ज्या, आप सोचने लगे कि तपस्याका तेज कर्तव्य–कर्तृत्वमें प्रगट होना चाहिये। इतनेमें १९२० के अगस्तकी पहली तारीख निकली। उस दिन लोकमान्य तिलकजी " शिष्ठं ध्येयं स्वराज्यस्थ यत्नैः संस्थाप्य भारते। " विष्णुलोक गये। तो आपका कर्मयोग राघवेंद्र–जीकी आँखें भर रहा। आँखोंमें आँसूओंकी छलछलाहट थी, शब्दोंमें भारीपन था। राघवेंद्र कहने लगे कि " जनताजनार्दनकी सेवाही सर्वोत्तम तप है। आत्मोत्थानसे जनोत्थान अधिक श्रेयस्कर है। दासता मनुष्यके विकासके लिये अभिशाप है। उससे छुटकारा आवश्यक है "

लोकमान्य तिलकके देहावसानसे आपका गीतारहस्य याने कर्मयोग राघवेन्द्रजीको मगजसे और हृदयसे आवाहन कर रहा। इसी कारण लोकमान्य तिलकके पश्चात् राघवेंद्रजीका जीवन विशेष रूपसे आरम्भ होता है। इसके पहले अपनी तपोभूमी बरहज आश्रमसे ब्रह्मचर्य–आश्रमका संचालन करके आपने शिक्षणका कार्य शुरू किया था। अडोस पडोस के जनपदोंसे अभी अनेक विद्यार्थी

बाबा राघवदासजीके गुरू

योगिराज परमहंस श्री. अनंत महाप्रभु

बाबा राघवदासजीके अनुयायी

श्री सत्यव्रतजी

बाबा राघवदासजीके भांजे

श्री. राजाराम कुलकर्णी

लाये । १९२१ में गोरखपूरमें महात्माजीका पहला पदार्पण हुआ । कलकत्तेके खास काँग्रेस-अधिवेशनने महात्माजीका असहकार-कार्यक्रम मंजूर किया था १९२० में । ब्रिटिश साम्राज्यकी प्रतिष्ठाकी अवहेलना इतनी चौरस कृतिसे करनेका राष्ट्रीय निश्चय देखकर, उसके प्रयोजक महात्माजीपर सरकारकी इतराजी असीम थी । इसी अवस्थामें संन्यासी राघवेन्द्रने अपने आश्रमवासिओंसहित महात्माजीका हार्दिक स्वागत किया । महात्माजीने आश्रमके विद्यार्थिओंसे पूछा कि " विद्या संपादन करनेके बाद तुम क्या करना चाहते हो ?" तुरन्तही एकने जबाब दिया कि " हम आमरण सीखतेहि रहेंगे । लेकिन सिर्फ किताबोंसे नहीं । संसारके अनुभवसे प्रायः । और साथ साथ देशसेवा करेंगे । " उत्तर सुनकर महात्माजी प्रसन्न हुअे । सीखनेके लिये जीना और जीनेके लिये सीखना, यह है विकासवादी जीवनकी सफलताकी गुरुकिल्ली । उसी अपने शिष्योंके हाथ देनेवाले राघवेंद्रजीको स्वागतोपरान्त महात्माजीने सारे देशकी ओरसे " बाबा राघव-दास " कह दिया । तीनसौ बरसोंके पहले समर्थ रामदासस्वामीका अयोध्यावासी शिष्य राघवदास था । बरहजके युवक संन्यासीको वही स्मृति आई और नये नामसे आनन्द-आनन्द हुआ ।

महाराष्ट्रका राघवेन्द्र शेषो पाच्छापूरकर अब उत्तर-प्रदेशका बाबा राघवदास बन गया । उसी नामसे अतःपर आप चले और प्रसिद्ध भी हुअे । अपने स्नेही, सम्बधी, रिश्तेदारोंको खत लिखकर अब बाबा राघवदास समाचार दे, ले रहे । अपने जीवन कार्यकी प्रणालीभी उनको दे चुके । राघवदासजीका चरित, चारित्र्य, चारु कीरत सुनते पढतेही या उन सब समझकर महा-राष्ट्र और उसकाभी जो भूभाग राघवदासजीसे प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष संबंधित था, आनंदीआनंद कर रहा । सबकी सदिच्छा लेकर और हो सके तो " सर्वेषामविरोधेन " राघवदासजीने की हुअी सेवासे प्रभावित होकर जनता आपको भगवान् समझने लगी ।

राघवदासजीके विद्यार्थिओंसे अधिकांश समाजसेवी और राजनैतिक नेता बने हैं। इस कार्यको व्यापक और विस्तारपूर्वक चलानेके लिये राघवदासजीने उपेक्षित स्थानोंपर मिडल स्कूल खोलना शुरू किया। इस सेवासेभी जब आपको संतोष नहीं हुआ, तब १९३० मे आपने हिंदी राष्ट्रभाषा–विद्यालयकी नीव महात्मा-जीके शुभ करकमलोंसे डलवाई। जनतामें जागृतिकी ज्योतिको जाज्ज्वल्यमान करनेवाले महान क्रांतिकारी बाबा राघवदासजी १९२४ से १९२६ तक अपनी पूरी शक्ति शिक्षणसंस्थाओंकी स्थापनामें देते रहे, जिसका एकमात्र उद्देश राष्ट्रीयतासे ओतप्रोत सच्चे देशभक्त तैयार करनेका था। शिक्षित और दीक्षित युवकोंके सामने राघवदासजी, लोकमान्य तिलक, नामदार गोखले और पंजाबकेसरी लाला लजपतरायके आदर्श रखते थे; पूनाके फर्ग्युसन कॉलेजकी स्थापनाका और डेक्कन एज्युकेशन सोसायटीका इतिहास सुनाते थे और स्वार्थत्याग का यज्ञमय जीवन समाजको कितनी उंचाई दे सकता है, इसका विवरणभी करते थे। महात्मा गांधीद्वारा संचालित असहयोग–आंदोलनमें उतर पडनेका विवेक जब राघवदासजीने किया, तब संस्थाओंकी व्यवस्था अपने सच्छिष्य सत्यव्रतजीपर सौंपकर, राघवदासजीने अपना राजकीय जीवन संस्थाओंसे अलिप्त रखा। अगले कालमें आपने अनेक बार बन्दीखानायात्रा की, डण्डे खाये, बन्दीवासकी यातनाअें सहीं, चक्की पिसी, परन्तु कर्तव्यपथसे कभी विचलित नहीं हुअे। परिणामसे जनजनमें नव जागरण हुआ और गांवगांवमें साक्षरताकी लहर फैलाई थी आपकी संस्थाओंने। १९३० के पहले राघवदासजीकी शिक्षा संस्थाओंने ऐसा जनजागरण पैदा किया कि १९३० से १९३३ तक चलनेवाले सत्याग्रहमें बरहज और देवरियाके सत्या–ग्रही जत्थोंने राघवदासजीके नेतृत्वमें बस्तीतक जाकर नमकका कानून तोड दिया। इस प्रकार शिक्षणसंस्थाएं स्वातंत्र्य–समरके केंद्रभी बनीं। इनके अधिकांश अध्यापक और छात्र जेल गये।

१९३१ में गांधी–अर्विन समझोता हुआ। महात्मा गांधीने राष्ट्रभाषा प्रचारका व्रत लिया। आसाम तथा मद्रास का दौरा किया। राघवदासजीभी महात्माजीके साथ थे। मद्रास, बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र, मलबार, आसाम, बर्मा, लंका, नेपाळ, और चीनतकके छात्र हिंदी सीखने बरहज आये। बरहजके राष्ट्रभाषा–महाविद्यालयसे उत्तर–प्रदेश और बिहारकेभी छात्र विशारद, साहित्यरत्न और साहित्यालंकारकी उपाधियाँ पाने लगे।

राघवदासजीने इसी समय हायस्कूलोंकी आवश्यकताका अनुभव किया। क्यों कि गरीबोंके लडके सरकारी नौकरियाँ हाइस्कूल उत्तीर्ण होनेपरही पा सकते थे। पर उन दिनों हाइ–स्कूलोंकी शिक्षा गरीबोंकी महंगी पडती थी। लडकेको दूरी दूरीसे मदरसा आना जरूरी था। राघवदासजीने झोंपडियोंमें और पेडोंके नीछे हाइस्कूल चलवाये। केवल देवरिया जिलेमें चालीस हाइस्कूल चले। गोरखपूर, आझमगड, बलिया, गाझीपूर अन्यान्य जिलोंमेंभी ये स्कूल खुले।

राघवदासजीने फिर सांस्कृतिक और साहित्यिक चेतनाकी ओर ध्यान दिया। विष्णुयज्ञ तथा रुद्रयज्ञ हुअे। रामायण–गीताका संदेश घरघरमें पहुँचा। हिंदु, बुद्ध, सीख, और जैन मतोंका समन्वय राघवदासजीने किया और इसकेलिये बरहजसे एक परीक्षा चलाई गई। कुशीनगर और सारनाथकी ओर १९२४ में ही राघवदासजीका ध्यान गया और वहाँ संस्थाएं खोली गईं। " नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। " की भावना सर्वत्र फैल रही। ज्ञानके बिना जो जो कलाभी कह जाती है, वही अव–कला गिनी जाती है। इसलिये कौनसीभी अवस्था या स्थिति बिगर जानकारी न रहे, यह थी प्रेरणा राघवदासजीके इन सब प्रयत्नोंकी। इन सब प्रयत्नोंसे राघवदासजी चीन–ब्रह्मा–जापानके बुद्धानुयायिओंका श्रद्धास्थान हो रहे। स्वभावतः कुशीनगरके बुद्ध–विहारके कमरेमें राघवदासजी दूरी–दूरीके देशोंसे चंदा जमा कर सके। इतनाही नहीं, राघवदासजी १९३७ में बलदेशके

बुद्धवांगमय–परिषदके और आसाममें भरे हुअे बुद्धानुयायिओंके संमेलनके अध्यक्ष चुने गये। इस स्थानसे राघवदासजीकी अखत्यारी लोगोंको कार्यप्रवर्तक कर रही।

इतना होकर भी राघवदासजीका समाधान न था। ज्ञान क्रियावान् होना चाहिये। "यः क्रियावान् स पण्डितः।" खाली पढाईके पण्डित होनेमें राघवदासजी भूषण ना मानते थे। तो १९३४ के भयंकर बाढमें तथा भूकम्पमें राघवदासजीने सक्रिय भाग लिया। "दया धरमका मूल है" और क्रियावन्त ज्ञानीकी दया ईश्वरका प्रसाद है। राघवदासजीसे यह प्रत्यय जनताने लिया। १९३८ के भयंकर जलप्रलयमें राघवदासजीने जनताको तरह–तरह अन्न, वस्त्र, कंबल देकर बचाया। राघवदासजीने अस्पृतानिवारण किया, गोशालाअें खोलीं, अनेक उपयोगी धन्देभी शुरू किये। १९३७ ईसवीमें राघवदासजीने आश्रमसे पूर्णमासीके अवसरपर ग्रामोद्योग–मेला लगवाया जो पंधरह दिनोंतक रहा। उसमें भिन्न भिन्न उद्योग, पशुप्रदर्शनी, गूड बनानेकी विधि, खाद बनानेका ढंग, लोहारगिरी आदिका आकर्षक प्रदर्शन हुआ। उस मेलेमें कुटीर–उद्योगोंके अतिरिक्त लोकगीत, आल्हा, बिरहा आदिकी प्रतियोगिता कराया। यह मेला उत्तरप्रदेशमें अपने ढंगका एक अकेलाही ग्रामोद्योगमेला रहा।

१९३८ से शुरू हुआ राघवदासजीके ग्रामोद्योग–उत्थानका कार्य अंग्रेजोंको बहुत खटकता था। क्यों कि जनताकी शक्ति उनसे बढ जाती और वह शक्तिदाता नेताके पीछे सदाके लिये खडी रहती। राघवदासजी तो फिर ऐसा नेता थे जो जनताके सच्चे सन्मित्र! अभाग हो या सुभाग हो, जनताके दुखमें दुख और जनताके सुखमें सुख लेनेवाला नेता राघवदासजी थे। १९२२ के समय चौरीचौराका भारतविख्यात कांड हो गया था। उसी समयसे जनताने और सरकारने राघवदासजीके सेवाव्रतका प्रत्यय किया था। चौरीचौराके काण्डने महात्माजीका स्वातंत्र्ययुद्ध खटाईमें पड गया था। एक जमादार और इक्किस पुलीस पुलीस–

चौकीमें बंद करके, चौकी अग्निके स्वाधीन की गई थी। एक तरफ तो राघवदासजीने गोरखपूर जिलेपर लगे इस महान कलंककी कालिमा धोनेका प्रयत्न किया। दूसरे तरफ उन निरीह व्यक्तिओंकोभी बचानेका प्रयत्न किया, जो चौरीचौरा-हत्याकाण्डमें फसाये गये थे। राघवदासजीको वे प्रयत्न बन्दीखानोंसे करने पडे। तो भी आप यशस्वी हुअे थे। सरकारकी और जनताकी नजरमें राघवदासजीकी यह सेवावृत्ति ज्वलन्त थी। जनता उसे प्यार करती थी। और सरकार ? इसीको तहसनहस करनेका उद्देश रख रही थी। १९४२ के आंदोलनमें उत्तर प्रदेशमें सर्वप्रथम नेशनल हेरल्ड प्रेस और परमहंस-आश्रम बरहज गैरकानूनी घोषित हुअे और कॅप्टन मूरने कुटीरउद्योगको एक एक करके सत्यानाश कर दिया। उसके पहलेही अंग्रेजी सरकारकी द्वेषभावनाका प्रत्यय १९४० में आया था। उस वख्त राघवदासजी व्यक्तिगत सत्याग्रहमें दो बरसकी सजा पाकर बंदीवासमें चले गये थे। अंग्रेज अधिकारियोंने आश्रमपर चलनेवाले कुटीर-धन्धोंको नष्ट करनेकी कुचेष्टासे राघवदासपर गबनका मुकादमा चलाया था। इसका निर्णय गोरखपूरके न्यायाधीश श्री भार्गवने किया। आपने अपने फैसलेमें लिखा है कि जिसने अपना सब कुछ त्याग कर हजारो रुपया संस्थाओंपर खर्च किया, इसके ईमानपर संदेह नहीं किया जा सकता।

व्यक्तिगत सत्याग्रहकी सजाके दिन काटकर राघवदासजी १९४२ में छूटकर आये और फेर थोडेही दिनोंके बाद १९४२ की आंदोलनमें शामिल हुअे। "भारत छोडो" का नारा लगाना, भारतके चोटीके नेताओंमे गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर लेना, ब्रिटिश सरकारके कोटिशः प्रयत्न करनेके उपरान्तभी न पकडा जाना, परंतु पंडित जवाहरलालके गोरखपूरमें नजरबंद होतेही आपने आपको बंदीखानामें डालना इत्यादि कार्य साहसके द्योतक है राघवदासजीके। दक्षिण भारतमें आन्दोलनका प्रचार राघवदासजीने उस वख्त यहांतक किया कि जब आप चेचकसे

बीमार पडे रहे, तब कहीं घूमना छूट गया। जब गान्धीजीने गुप्तचर न रहनेका आदेश दिया, तब उसी आदेशसे राघवदासजी बंदीखाना गये। १९४६ में छूटनेके बाद आपने अपना सारा समय राष्ट्रीय उत्थानके कार्योंमें लगाया। खादी और ग्रामोद्योगकी ओर अग्रसर हुअे और इनके विकासके लिये २३००० रुपयेकी धनराशि लगा दी।

१९४७ में देश स्वतंत्र हुआ। देश स्वतंत्र होनेके बाद महात्माजी इस लोकसे चल गये। आपकी रामराज्यकी कल्पना रह गयी। तोभी चक्रनेमिक्रमसे १९४८ में एक उपचुनाव हुआ। तब कोई ऐसा व्यक्तित्व नहीं था जो आचार्य नरेंद्र देवके सामने विजयी होता। राघवदासजी इस चक्रव्यूहसे काँग्रेसकी तरफ विधानसभामें गये। जलाशय जीर्णोद्धारका काम आपने कराया। आवश्यकता पडनेपर सरकारको भी खरीखोरी सुनानेवाले निर्भीक सन्त नेता राघवदासजीने कोल्हूकरके विरुद्ध ३ फरवरी १९५० को सत्याग्रहका कठोर कदम उठाकर सरकारको सचेत किया, उचित मार्गदर्शन किया और दीन कृषकोंका बहुत बडा उपकार किया। आप मानते थे "वरं जनहितं नित्यम्।" आपने और दिखाया भी कि वह आझादीही व्यर्थ है, जिसमें देशकी असंख्य जनता गरीबीकी चक्कीमें पिसती हो।

इसी तरह राजपदसे विलग होकर कुछ दिन जनताजनार्दनकी सेवामें रहनेके उपरान्त डेढसौसे ज्यादह सम्पूर्ण संस्थाओंको भगवानके भरोंसे सत्यव्रतजी आदि शिष्योंपर छोडकर राघवदासजी भूदानयज्ञमें लग गये। भूदानकी पैदल यात्रा विनोबाजीने जबसे बिहारमें शुरू की तभी (११ एप्रिल १९५५) से राघवदासजीने फतेहपूरसे अपनी यात्रा शुरू की। पर आपका ऐसा विश्वास था कि जिस कार्यको बरहज आश्रमसे महाप्रभुका आशीर्वाद लेकर प्रारंभ करते हैं, वह अधिक सफल होता है। तो सीधे आश्रम आकर बरहजके सरयूतटसे अपनी अखंड भूदानयात्रा राघवदासजी प्रारंभ किये। आपके अंतःकरणने व्यापक रूप

ले लिया और नगर-नगर, डगर-डगर पदयात्रा करते हुअे करुणाकी क्रांतिकान्तिका आप अलख जगाने लगे। सारे उत्तर-प्रदेशमें आपकी तेजस्वी ज्योति सब लोगोंको प्रकाश देती रही। जब ग्रामदानके रूपमें भूदान आगे बढा, राघवदासजी नाचने लगे। आपका रामराज्यका स्वप्न सिद्ध होनेकी वेला आपको दिखाई देने लगी। इसलिये तो आप "सत् आवन्" की रट लगाते थे।

जबसे १९५७ प्रारंभ हुआ, राघवदासजी अपना क्रांतिकारी अभियान करते गये। दिन को दिन और रातको रात नहीं समझा। आपने कहा "१८५७ से हमें बलिदानका पाठ पढाया है"। १८५७ के शहीदोंके लिये आप तडपते थे। अंग्रेज जिसे दुष्मनमें दुष्मन समझते थे वह सेनापति तात्या टोपे, रणरागिणी झांशीवाली लक्ष्मीराणी, जमखिंडीके अधिपतीका सच्चासेवक छोटूसिंग, ऐसे ऐसे, १८५७ के वीरोंका राघवदासजी इतना आदर करते थे कि उन लोगोंका और जो जो नन्ही या बडी व्यक्ति उस उत्थानमें पारतंत्र्यके विनाशकी प्रतिज्ञासे लढ रही, उनका कृतज्ञताके साथ संस्मरण अुनके अुनके पराक्रमस्थानोंपर या जन्म-स्थानोंमें हो जाये, ऐसी प्रगाढ इच्छा थी राघवदासजीकी।

उत्सव-समारोहवालोंको इतनी परवाह थी या ना थी, विचारप्रवर्तन करके हो सका इतना प्रयत्न राघवदासजीने किया। ऐतिहासिक स्मरण-स्मारकोंसे कार्यकर्ताओंको स्फूर्ति मिलती है और आत्मविश्वाससे काम करना आसान होता है। "पूर्व दिव्य जिनका, उनका रम्य भावि काल।" इसीलिये कर्तृत्ववन्त पूर्वजोंकी पूजा करके उनकी परंपरा पात्रतासे चलाना अपना काम है इतनाही कटाक्ष राघवदासजीका था। मगर अन्धानुकरण आपको मंजूर नहीं था। भूतकालका स्मरणसुख और भविष्यकालका स्वप्नरंजन आपको वर्तमानकालमें कृतिके लिये आवश्यक था। प्राप्त परिस्थितिसे समरस होकर अपनी ऐति-हासिक परंपराका दिमाख रखना और उज्ज्वल भविष्यका दिया

जलाना विवेकी मनुष्यका कर्तव्य है। यही थी भावना राघव-दासजीकी। जो कुछ भी कर्तृत्व न करके, खाली पूर्वजोंकी बढाई कहा करता है, वह मूरख है, यह है इशारा श्रीसमर्थ रामदास स्वामीजीका। उसे राघवदासजी अच्छी तरहसे जानते थे। इस-लिये १८५७ के शूर-वीर-कर्तृत्ववन्तोंकी समाराधना करनेमें राघवदासजी अभिमान रखते थे और अपने कालसूचक वर्तमान कर्तव्यकी पूर्तिमें आप रस लेते थे। तो भूदानयज्ञका काम जो आपने हाथ लिया था, उसकी उज्ज्वल प्रगति थी आपका प्रमुख लक्ष्य। इस लक्ष्यसे निरंतर पाँच वर्षोंसे पैदल यात्रा करनेके कारण बाबा राघवदासजीका स्वास्थ्य दिन दिन गिरता जा रहा था। दरिद्र, साहस, व्रत, सहनशीलता और कठिनाई अपनी शारीरिक और मानसिक मगदूरसे आदमी गेंदकी तरह झेल सकता है। लेकिन आदमीके जीवनमें एक कालखंड ऐसा आता है कि थकावटसे शरीर, मन और मगज, मजल मारनेमें बराबरी नहीं कर सकते। अक्टूबर १९५७ में मालूम हुआ कि राघवदासजी म्हैसूरके सर्वोदय-संमेलनसे मध्यभारत जाते समय मिरझापूरके आदिवासि-क्षेत्र जायेंगे। आप प्रतिदिन दससे पंधरा मील चलते थे। उत्तर प्रदेशसे आप विनोबाजीके आदेशसे मध्यप्रदेश गये। भूदानयज्ञके लिये मध्यप्रदेशमें फिरते फिरते राघवदासजी आदिनिवासिओंके बीच पहुँचे। आपने देखा कि वे भूखे हैं। आपका सन्तहृदय सदाके लिये जागृत था। उसे सहसंवेदना हुई। आपका मगज सहानुभूतिका सोच कर रहा। तो उन भूखोंके बीच पाँच-छः दिनतक आपने भोजन नहीं किया। उस उपवासने राघव-दासजीके जर्जर शरीरको और भी जर्जर कर दिया। फिर भी आपको क्या परवाह थी ?

" अजरामरवत् प्राज्ञः विद्यामर्थंच साधयेत् ।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ।। "

इस सुभाषितकी मूर्तिमति प्रकृति राघवदासजीकी थी। कार्यकर्ताओंके बार बार कहनेपर आपने कहा, " मुझे आगे बढने

दो। मैं रुकुंगा नहीं। आगे बढताही चलूंगा और कहीं गिर जाऊंगा।"

यही बात सत्य हुअी। इसके बादही राघवदासजी सींवनीमें मध्यप्रदेशीय – महाकोशल कार्यकर्ताओंके – सर्वोदय संमेलनका उद्घाटन करने गये। ८ जनवरी (१९५८) को छोष, सीत लग चुकी थी। ज्वरका प्रकोप चल रहा था। फिर भी प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल, तीन बार संमेलनमें सम्मीलित होकर राघव-दासजी भाषण करते रहे। कार्यकर्ताओंसे बातें करते रहे। सर-गुजाकी वनवासी-सेविका राजमोहिनी देवीको आपने अपना चरखा दिया था और अपनी पुत्री माना था। अब तो आप वहाँ पाँचसौ एक ग्रामदानोंका संकल्प कर चुके थे। उसीके लिये आप तारीख ९ जनवरीकी रात्रीको आयोजन करनेवाले थे। साथके लोक एकत्र हो गये थे कि आपको (सेरेब्रल मलेरिया मेनिंजाइ-टिस) गर्दनतोड बुखारने आ घेरा। अर्धबेहोश हालतमें आपके मुखसे " मैं तय्यार हूँ। चले सरगुजा, विनोबा " का उच्चारण हुआ।

तारीख ११-१२ जनवरीके बीचकी रातको राघवदासजी रोजसे कुछ पहले उठे। आपका शरीर कुछ लडखडाया। पासके शंकर-देव " मानव " खडे हुअे। राघवदासजीने इशारा किया कि कोई बात नहीं, पैर फिसल गया था। राघवदासजी स्नानगृहमें गये। वहाँ कुछ गडबडकी आवाज हुअी। शंकरदेव फिर उधर बढे। पर स्नानगृहका दरवाजा भीतरसे बन्द था। थोडी देरबाद राघव-दासजी बाहर निकले। आकर खाटपर मुँहके बल लेट गये। प्रार्थनाके समय भी नहीं उठे।

नौ बजेके करीब आपके मुहसे वाक्य निकले जो इस प्रकार थे। " नौ अडतालीस, नौ अठ्ठावन, मानव, सरगुजा, विनोबाजीसे " लोगोंने पूछनेका प्रयत्न किया कि इन वाक्योंमें राघवदासजीका आशय क्या था ? कुछ जानकारी नहीं हो सकी। लिख भी नहीं सके राघवदासजी।

१२ जनवरीसे १५ जनवरीके बीच तारीख १४ को कुछ स्थितिमें सुधारके लक्षण दिखाई दिये थे। पर कुछ घंटेके बादही फिर स्थिति बिगडतीही गई। पन्नालाल भार्गवजीका सब परिवार दिनरात सेवामें लग रहा था। डॉक्टर नेमीचंद दिवाकर, डॉक्टर उत्तमचंद मालू, वैद्य भगवतीप्रसाद तथा उमाशंकर दूबेने दिनरात राघदासजीकी परिचर्या की। दोनों भी डॉक्टर एम्. बी. बी. एस्. थे। उनके साथ सिव्हिल सर्जन श्री. बॅनर्जि और सीवनीके श्री. कुंदनलाल राघवदासजीकी शुश्रुषायें कर रहे थे। राघवदासजीकी दहिनी बाँहमें सुईके द्वारा सलाईन पहुँचाई जा रही थी। आपको ब्रान्को-निमोनिया हो रहा था। गर्दनतोड बुखार थी। १५ जनवरी १९५८ को बुधवार रोज दो बजते हुअे राघवदासजीका तापमान १०२, नाडी १५० व साँस ६० थी। शामको ५ बजे टिलिफोनसे जबलपूरकी जाँचकी सूचना मिली कि मिनिंजिटिस है ही।

शामको भार्गव परिवारकी बहनोंने कीर्तन किया। पहलेही श्रीशंकरदेव "मानव" ने हिंदीमें और बादमें पं. रामदयाल पाण्डेयने संस्कृतमें गीता सुनाई। ११ बजकर २० मिनिटपर अठाहरवे अध्यायके अंतिम श्लोक का अंतिम शब्द समाप्त होते होते राघवदासजीने शरीरका त्याग कर दिया। मध्य रात्रिमें बाबा राघवदास ब्रह्मीभूत हो गये। गीतामें आपकी अपार श्रद्धा थी और रामायण आपका प्रिय ग्रंथ था। अस्वस्थ रहने अथवा किसी विशेष उलझनमें आप रामायणकी कथा बहुत पसंद करते थे। कभी कभी तो स्वयं व्यास बन जाया करते थे और श्रोताओंको गद् गद् कर देते थे। जनताजनार्दनकी सेवामें मानापमान, सुखदुख, शीतोष्ण द्वन्द्वोंपर आपने कभी ध्यान नहीं दिया।

"ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म-समाधिना॥

बाबा राघवदासजीने जीवन ब्रह्मार्पण कर दिया। गौरीशंकरकी चोटीसा आपका जीवन ऊँचा था; निडर अकेला था।

विघ्न और बाधा के शत शत संकट आपने हँसकर झेले थे।

तारीख १६ को सबेरे ८ बजे सिवनीके सहस्रो नरनारिओंने गाँधीचौकपर श्रद्धांजलि अर्पित की। बससे राघवदासजीका शव जबलपूर लाया गया और वहाँसे प्रयाग। व्यवस्थामें कमिशनर श्री. नरोना तथा सिवनी डिप्टी कमिशनर अबदुल सत्तार खाँ और जबलपूरके चौधरी मस्तराज सिंहने बडी सहायता की।

राघवदासजीकी अस्थिओंका विसर्जन प्रयागमें हुआ। संन्यासीके शवका दाहसंस्कार नहीं होता, ऐसी मान्यताके कारण शवको त्रिवेणीमें प्रवाहित किया गया। वह तारीख १७ जनवरी १९५८ थी। राघवदासजीका पार्थिव शरीर काशी एक्सप्रेससे इलाहाबाद स्टेशनपर लाया। काफी पूर्व राजर्षि टंडनजी आ पहुँचे थे। श्री करणभाई, श्री दादाभाई नाईक, श्री शर्माजी, श्री कौलजी, श्री लक्ष्मीनारायण भारतीय, श्री कृष्णदेवजी उपाध्याय आदि लोग बनारस, सेवापुरी आदिसे पहलेही पहुँच गये थे। इलाहाबाद नगरके प्रमुख और सामान्य नागरिक उपस्थित हो गये थे। राघवदासजीके बरहज आश्रमसे और गोरखपूरसे भी लोग दिनभर आतेही रहे। उन सब लोगोंके साथ बम्बई राज्यके राज्यपाल श्री श्रीप्रकाशजीने, जो काशी एक्सप्रेससे बनारस जा रहे थे अपने पिताजीको मिलनेके लिये, इलाहाबाद स्टेशनपर राघवदासजीको श्रद्धांजलि अर्पित की। पुष्पमालाओंसे राघव-दासजीको आच्छादित करके सरस्वती घाटपर धूमधामके साथ ट्रकद्वारा ले जाया गया। वहाँसे फिर नावोंमें त्रिवेणी संगमपर राघवदासजीकी देह सविधि ले आई गई। लोगोंका ताँता लगा हुआही था और नावोंसे त्रिवेणी संगमका उतना पाट भरसा गया था। संगमपर प्रार्थनाएं हुअीं। एवं पूजादिके अन्य संस्कारोपरान्त राघवदासजीकी देह त्रिवेणीमें विसर्जित की गई। स्टेशनपर राघवदासजीका शव उतारा गया तबसे विसर्जनतक लोगोंके हृदय ऐसे भर आये थे, जिन्हें आँखोंके बाँध नहीं रोक सके थे। अनेक साथी-संगी शिष्योंने अपना आकुल हृदय लेकर अपने प्यारे

बाबाजीके फूलोंके साथ वहाँसे बिदा ली। आश्रम बरहजके कार्यकर्ताओंने तेरह दिनोंतक एक घण्टेका मौन और चर्खा कातनेका अपना व्रत पूरा करके अपनी श्रद्धा अर्पित की। स्थानीय चीनी-मिल-मजदूरोंकी सभामें श्रमविभागसे और बहुगुणा-महिलामंडलसे भी श्रद्धांजली अर्पित हुअी। बरहज आश्रमपर श्रद्धा सप्ताहमें सम्मीलित होनेकेलिये बाबा राघवदासजीकी विधवा भाबी श्रीमती रुक्मिणीदेवी, भतिजी सौ. शकुन्तला भोण्डे तथा भांजे श्री राजाराम कुलकर्णी आये थे।

उत्तर-प्रदेशके कोनोंकोनोंमें इस सन्तके श्राद्ध दिवसके दिन २९ जनवरी १९५८ रोज हरिजनों, विकलांगो एवं साधुसन्तोंको बीस हजार संख्यामें अनाजवस्त्र वितरित किये गये। हिन्दीके कई दैनिक पत्रों एवं साप्ताहिक पत्रोंने आपके श्राद्धदिनके अवसरपर विशेषांक निकाले। विद्वानों, कवियों, लेखकों, नेताओंने काशीके श्री गोपालशास्त्री दर्शन-केसरीके सभापतित्वमें श्रद्धांजलि अर्पित की, जिसका मतलब था:-

"परोपकारैकधियः स्वसुखाय गतस्पृहाः।
जगद्धिताय जायन्ते साधवस्तत्समा भुवि॥"

जब आदमी जन्म पाता है तब रोते रोते भूपर आता है। उसी वख्त कुलका होनहार प्रदीप देखकर परिवार आनंदसे प्रफुल्लित हो जाता है। नर करणी करे तो नरका नारायण हो जाता है। करणी करनेवाला नर जब आत्मानंदसे अपनी अंतीम नींद लेता है, तब परिवार असहायतासे रोता है। धन्य है वह नर जिसके विरहसे जनता रोए। धन्यतर है वह नर जो अपने कर्मयोगमें गुञ्ज रहते रहते और अपना कर्तव्य बजाते बजाते इहलोककी यात्रा समाप्त करता है और अपने विरह-दुःखमें भी अपने चरित्र और चारित्र्यका आदर्श समाजके सामने अनुकरणके लिये रखता है। पर धन्यतम, त्रिवार धन्य है वह नर जिसकी करणी, कर्तव्य और कर्तृत्वका आदर्श होकर भी दुःखित

परिवारको, परीक्षावन्तोंको और चिकित्सकोंको एक स्फूर्तिस्थान या अभिमानस्थान होता है, नये जमानेमें नये कर्तृत्वके लिये। बाबा राघवदासजीका कर्तृत्व धन्यतमसे भी धन्य है, क्योंकि आपकी साँस, आपका उच्चार, आपके आचारका हरएक पग दीनदुबलोंके उद्धरणके लिये या अन्यायके खिलाफ झगडनेके लिये बालहृदयकी साधुसरलता दिखानेवाला था।

बाबा राघवदासजी अनन्तमें विलीन हुअे। तो चतुर्दिक् सहजोद्गार निकले, जिनमेंसे कोई अभ्यासयोग्य होते है।

राष्ट्रपति डॉक्टर राजेंद्रप्रसादः—

बाबा राघवदास एक आडंबर–विहीन कार्य कर्ता थे। गरीबों, बीमारों एवं पीडितोंके सेवक थे। स्वातंत्र्य–संग्रामके एक वीर सैनिक तथा जनताके लिये बलिदान करनेवाले सेवक थे।

श्री पुरुषोत्तमदास टंडनः—

उनके समान त्याग और तितीक्षा अन्य किसी सार्वजनिक सेवकमें नहीं देखी।

श्री सुचेता कृपलानिः—

उनमें कभी कोई बडप्पन या नेतागिरीका कोई अभिमान दिखाईतक नहीं देखा था।

दे० शंकरराव देवः—

बाबा राघवदासजी जैसी हस्तीही विश्वनागरिकका बीज या अंकुर है।

(१)

वह कौन उडा नभमें देखो, देवोंका कोई दूत चला।
जगतीका कोई ज्योतिपुंज, हो करके ब्रह्मीभूत चला॥
मत कहो कि राघवदास चला, भारतमाँका अभिमान चला।
दीनोंदलितोंका प्राण चला, झोंपडियोंका भगवान चला।
आज चतुर्दिक नाच रहा है, सर्वनाश बन मरण हमारा।
अरे वज्रसा टूट पडा है, बाबा यह बलिदान तुम्हारा॥

(२)

उत्तर प्रदेशका वह गांधी, पूर्वी जनपदका प्राण कहाँ ।
बरहज अनाथ हो विलख रहा, इसके जीवनका त्राण कहाँ ।।
आश्रमका कण कण रोता है, उसका वह सतत विलास कहाँ ।
सरजू सिर धुन धुन कर रोती, 'मेरा वह राघवदास कहाँ ?' ।।
वह कहाँ छिपे, क्या नहीं देखते, टूट रहा विश्वास हमारा ।
दिग–दिगंतका अश्रु बन गया, बाबा यह बलिदान तुम्हारा ।।

(३)

हा ! अब सेवा कौन करेगा, भूके रहकर भूपर सोकर ? ।
मूंगफली खा, चना चबेना, निराहार हो नंगे रहकर ।।
नरमें नारायण कौन देख, घरघरमें अलख जगायेगा ।
अब कौन कोडियोंके घावोंको, जा जाकर सहलायेगा ।।
हाय ! लुट गया आज धरासे सर्वोदयका अटल सहारा ।
बापूकी सुधि जगा रहा पर, फिर बाबा यह बलिदान तुम्हारा ।।

(४)

बापूको खोकर हम अनाथ, भारतवासी पछताते थे ।
पर बाबा तुम देख देख हम, दिलकी प्यास बुझाते थे ।।
था मिला तिलकका तेज तुम्हें, बापूकी करुणा मिली तुम्हें ।
योगी अनंतकी ज्योति राम, गौतमकी गुरुता मिली तुम्हें ।।
बर्बर पशुताको रौंध बडा था, यह अभिनव अभियान तुम्हारा ।
मानवता को जागृत करता, बाबा यह बलिदान तुम्हारा ।।

(५)

थे रामराज्यमें बाधक ये, अणुबमके गोले बडे बडे ।
भूदानयज्ञमें सेनानी तुम, इसीलिये थे कूद पडे ।।
हो करुणा, समता, समरसता, फट जाय विषमताकी नाली ।
था यही लक्ष्य जिससे तुमने, आहुति अपनीही दे डाली ।।
पायी तुमने वीर वीरगति, बना विनोबाका प्यारा ।
महाराष्ट्र, उत्तर–प्रदेश, फिर मध्यप्रदेश तीनोंको तारा ।।

इस आहुतिमें स्वराज्यका, नूतन है आह्वान तुम्हारा ।
अमर हुआ भूदानयज्ञ, पा बाबा, यह बलिदान तुम्हारा ।।

—सिंहासन तिवारी

(१)

महाराष्ट्रकी देह, साधना युक्तप्रांतकी,
बापूकी कल्पना, प्रेरणा भूमिसंतकी,
हिला एक क्षण मानदंड जी जनजीवनका
और हिल उठी मौन आत्मा भारतपनकी,
स्वयं हिल उठा आज मृत्युका भी सिंहासन ।
मिली वीरगति तुम्हें, हिला युगका वीरासन ।।

(२)

ढूंढ रही गंगा, यमुना भी खोयी खोयी,
सरयू बरहजके तटपर सिर धुनधुन रोयी,
कौन ले गया छीन लाडला मुझसे मेरा ?
" नहीं देवि, मानवजीवनका यही सबेरा,
यही मनुजकी विजय, कालपर है अनुशासन " ।
मिली वीरगति तुम्हें, हिला युगका वीरासन ।।

(३)

मौन हुअे तुम, वेद-ऋचाएं हंसकर बोलीं-
तपोभूमिकी दसों दिशाएं हिल कर बोलीं-
" चला गया वह " चरैवेतिका पाठ सिखाकर
एत्तरेय की देव-कथाएं सुन कर बोलीं-
" तेरे पथकी धूलि बने मस्तकका चंदन " ।
मिली विरगति तुम्हें, हिला युगका सिंहासन ।।

—तरुण

बाबा राघवदास

चरित्रके पहेलू

उत्तम शिक्षा क्रान्तिकी जननी है। महामना मालवीयजीने काशीमें हिंदु विश्वविद्यालय और सर सय्यद अहमदखाँने अलिगढमें इसलामिया युनिव्हर्सिटीकी प्रस्थापना की थी। राघवदासजी शिक्षाकी अलौकिक शक्तिको भली भाँति जानते थे। १९१९ में अनंत महाप्रभूके शिष्य राघवेन्द्र सत्यव्रतप्रभृति अवैतनिक अध्यापकोंको पातांजलयोग, सूत्रसांख्य, तत्त्वकौमुदिका अध्यापन करते थे। विनापुस्तक देखेही आप कंठस्थ सूत्रोंका उच्चारण करके उनका अर्थ करते थे। कुछ दिनोंके बाद आपने गीतारहस्य और नीतिशतक भी पढाया।

बीसवी सदीके दूसरे दशकमें पूर्व उत्तर-प्रदेशका पूर्वाञ्चल (केवल काशीको छोडकर) शिक्षामें इतना पिछडा था कि उसकी कल्पना की जा नहीं सकती। चिठ्ठियाँ पढवानेके लिये लोग आठ दस मीलतक आया करते थे। १९२१ के असहकार आंदोलन दबा जानेके वख्त राघवदासजीको प्रतीत हो चुका कि सरकारी नियंत्रणमें रहनेवाली शिक्षा-संस्थाओंके छात्र और शिक्षक ब्रिटिश सरकारकी कठपुतलिया बना दिये जाते हैं। राष्ट्रीय आंदोलन और राष्ट्रीय भावना भी उन्हींसे खतरनाक करनेका उद्योग हो रहा है। बचपनसे लोकमान्य तिलकजीकी राष्ट्रीय शिक्षा और इसका महत्त्व जाननेवाले राघवदासजी चौंक उठे और राष्ट्रीयताका चैतन्य उदयोन्मुख नवजातोंमें बोनेके लिये, जितनी हो सकती, उतनी शिक्षणसंस्था निर्माण करनेका निश्चय कर ले गये।

बाबा राघवदासजीका

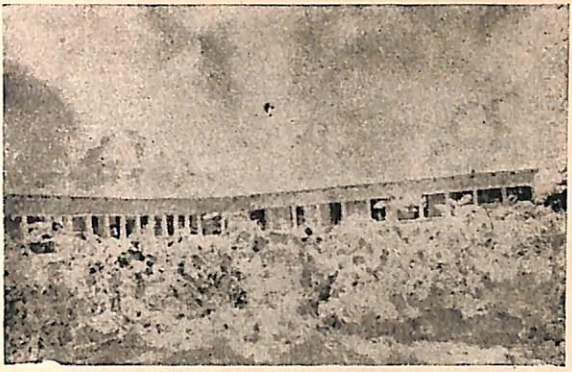

श्रीकृष्ण इंटर कॉलेज

संस्कृत पाठशाला

कुष्टसेवाश्रम–चिकित्सालय

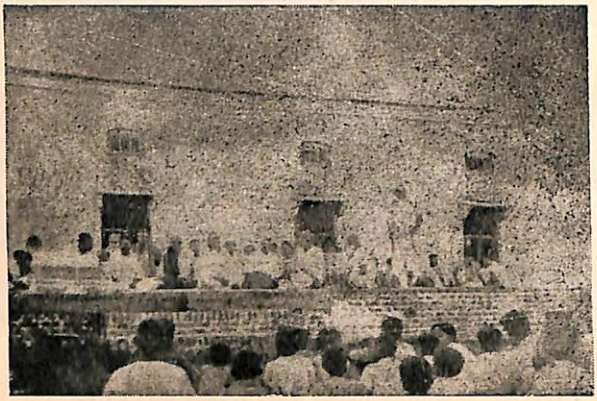

अनन्त–जयन्ति–उत्सव–सभा

शिक्षाका प्रचार ही आपके जीवनके व्रतोंमें एक महान व्रत हुआ, जिसके फलस्वरूप श्रीदरिद्रनारायण–विद्यालयकी स्थापना हुअी। वह श्रीकृष्ण इंटर कॉलेजके रूपमें आज भी जनताकी सेवामें रत है। इसी तरह सबसे पहले, धूसी– बसन्तपूर, गोर, खामपार, डोमवालियाके माध्यमिक शिक्षामंदिर राघवदासजीने शुरू किये। १५ जून १९२५ को बसन्तपूर– धूसीमें औद्योगिक, राष्ट्रीय मिडलस्कूलका उद्घाटन राघवदासजीने किया। १९२६ में राघवदासजी विद्यालय–भवनके लिये पथरदेवा कारखानोंपर नवतप्तीके रहसोंके यहाँ पैदल गये थे। विद्यालय–भवन–निर्माण कोषके लिये आपने दो दिनका अनशन किया। उस समय पथरदेवाके प्रसिद्ध शेठ श्री गोपीचंदने ५००) राघवदासजीको प्रदान करके आपका अनशन परिसमाप्त कराया। इतनाही नहीं, राघवदासजीके सतत प्रयत्नसे धूसी–उद्योग–विद्यालयके आदर्शपर देवरियाजनपदमें बीसों अनन्त–मिडल–विद्यालय खोले गये। देवरिया–शिक्षा–बोर्ड स्थापित हुआ जिसका सभापति राघवदासजी थे। इसके अंतर्गत जिलेके कोनेकोनेमें मिडल विद्यालयोंकी स्थापना हुई।

राजकीय उत्थानके कारण जभी राघवदासजी बन्दिशालाके रहिवासी बन जाते थे या शिक्षाक्षेत्रमें काम नहीं दे सके, तभी आपके सच्छिष्य, ब्रह्मचारी सत्यव्रतजी शिक्षामंदिरोंका संचालन करते थे। इतनाही नहीं ब्रह्मचारीजीने अपनी जिम्मेदारीपर बारह माध्यमिक शालाअें और बहुतसी संस्कृत पाठशालाएं भी निर्माण करके चलाईं। अतः "शिष्यादिच्छेत्पराजयम्।" का अनुभव राघवदासजी लेते रहे। पितासे पुत्रकी और गुरुसे शिष्यकी कर्तबगारी चढी–बढी रहनेमें राष्ट्रकी सुचेतना है। राघवदासजीको इस घटनामें आनन्द था। श्रीपरशुराम–चंडिका–वेदविद्यालय सोहनाग, चंदादि–संस्कृत–पाठशाला बालिया, संस्कृत–पाठशाला हट्टा और श्रीमती श्यामसुंदरी देवी–संस्कृत पाठशाला पैकोली, ये कई संस्थाएं हैं जिनका निर्माण केवल ब्रह्मचारीजीका है।

उन्नीस माध्यमिक शिक्षामंदिर और बहुतेरे संस्कृत पाठशालाओंका संचालन राघवदासजी और आपके सच्छिष्य कर रहे थे। परमहंसानंत–संस्कृतपाठशाला चंदाडीह और बरहज, श्रीकृष्ण-इंटर–कॉलेज बरहज, शहीद–रामचंद्र–विद्यालय बसंतपूर-धूसी, सर्वोदय हायर सेकंडरी स्कूल कौडी रामपूर, अनंत–हायर–सेकंडरी स्कूल गनियारी और संतराय, बाबा राघवदास इंटर कॉलेज देवरिया, भाटपार और फाजीलनाडर, बुद्ध-डिग्री-कॉलेज, कुशीनगर, राष्ट्रभाषा–विद्यालय बरहज, वेदविद्यालय सोहनाग, संस्कृत पाठशाला हाटा, श्यामसुंदरी पाठशाला पैकोली, ज्युनिअर हायस्कूल गडेर, थौर, खामपार, डुमवलिया, गोरखपूर–विद्यालय, ये थे उनके नाम। उस समय श्री तमकुडी नरेशजी इस पुनीत संकल्पकी पूर्तिके साथी थे। खासगत व्यक्तिओंका मंडल बनाकर लोगोंके जेबसे आनेवाला पैसाही उन संस्थाओंकी जीवनी चला रहा था। इस मण्डलका अध्यक्ष था पद्रौणाके राजाके भाई श्रीजगदीश नारायण सिंग। सेवामें सेवाकी तुलना मत होना चाहिये। क्योंकि सेवाकी भावना कहाँभी शुचि हो सकती है और प्रेरणाभी विशुद्ध रहती है। मगर सेवा करनेवालोंकी कुवत सेवाके कार्यमें श्रेणी पैदा करती है। तो सच यह है कि उसी समय देवरियाका जिल्हाबोर्ड सिर्फ तेरह माध्यमिक शालाओंका संचालन चलाता था।

राघवदासजीने जिन विद्यालयोंकी स्थापना की उनका नाम गिनना, सालसालका हिसाब करके, बहुत कठिन है। गोरखपूर–देवरिया आपका मुख्य कार्यक्षेत्र रहा। प्रायमरी स्कूल, डिग्री–स्कूल, आंतर्राष्ट्रीय पैमानेपर विश्वविद्यालय राघवदासजीने पदे पदे कायम किये। अद्‌भुत लगनशील और परिश्रमी सन्त आप थे। आपके सुझावसे पूज्य लाला लजपतरायकी स्मृतिमें बसंतपूर–धूसीमें हरिजन-लजपत पाठलालाकी स्थापना १९२८ में हुअी, जहाँ चारसौ छात्र अध्ययन करते हैं। प्रांतकी यह सबसे बडी हरिजन-पाठशाला है। राघवदासजीके द्वारा इस संस्थाके छात्रोंको

यंत्र–तंत्र–औद्योगिक ट्रेनिंगमें भी भेजा गया, जो उत्तीर्ण होकर सेवाकर्म कर रहे हैं।

१९३३ में महात्माजी स्वयं बरहज आश्रम पधारे और राष्ट्रभाषा–विद्यालय खोल रहें। चीन, जापान, लंका, श्याम, बर्मा, मलाया आदि देशोंके आगंतुक जनोंको हिंदीका ज्ञान वहाँ मिलता था और है। १९३४ में अँग्लोवैदिक स्कूल व बुद्ध–इंटर कॉलेज राघवदासजीके द्वारा खोल दिया गया। आपने श्रीजुगुल–किशोर बिडलाको प्रेरणा दी और "आर्यविहार" नामक विशाल एवं सुदृढ धर्मशाला निर्माण कराई। १९३५ में जब काँग्रेसका सुवर्णमहोत्सव हो गया, राघवदासजीने श्रीकृष्ण–इंटर–कॉलेजकी स्थापना की। १९३९ में डॉ. संपूर्णानंदनकी मददसे उसी संस्थाको अेक सरकारमान्य हायस्कूलका रूप मिल गया। १९३५ के बाद पूर्वी जिलोंमें (उत्तर–प्रदेशके) जहाँ कहीं भी विद्यालयोंकी स्थापना हुअी, उनमें, कुछको छोडकर सबको किसी न किसी प्रकारका सहयोग राघवदासजीने दिया। राघवदासजीकी मंत्रणासे बसन्तपूर–धूसीमें स्वर्गीय शहीद रामचंद्रकी स्मृतीमें शहीद–रामचंद्र–उच्चतर–माध्यमिक विद्यालयकी स्थापना उस समयके राष्ट्रपति पंडित जवाहरलाल नेहरूजीके द्वारा फरवरी १९४६ में कराई गई।

१९४७ में देवरियाका बी. आर्. डी. कॉलेज राघव–दासजीने निर्माण किया और उसके पश्चात् तुरन्तही भाटपरका। १५ ऑगष्ट १९४७ रोज सरोजिनी–कन्या–विद्यालय प्रस्थापित किया राघवदासजीने डॉ. सरोजिनी–देवी नायडूके सन्मानमें, जो उत्तर–प्रदेशकी राज्यपाल बनाई गई थी। फंजाबादका डिग्री कॉलेज भी राघवदासजीके प्रयासका फल है।

शिक्षणसंस्थाओंकी प्रस्थापनामें राघवदासजीका ध्येय था कि होनहार लडकीलडके स्वाभिमानी, स्वोद्योगी और स्वच्छ–ज्ञानी बनें। विवेकसे कार्यसाधन करें। छोटा हो या मोटा हो,

अपना कर्तव्य निश्चित करके उसके ऊपर अचल रहें। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" मान लें। और मानवताके साथ साथ अपनी मायभूमिकी सेवा ऐसी करें कि उसी सेवामें जनता रस लेकर कृतज्ञताके साथ उसका नाम ले रहें।

(२) शिक्षणके साथ साथ संस्कार, संस्कृति और उन दोनोंका प्रदान करनेवालोंके पदपद्मपर कृतज्ञताकी पूजा आवश्यक आती है। जून १९३४ में राघवदासजीनें कुशीनगरमें बुद्ध–डिग्री–कॉलेजकी प्रस्थापना की। ता. ४ जनवरी १९५३ ईसवीमें उत्तर प्रदेशके मुख्य मंत्री पंडित गोविंदवल्लभ पंतने कॉलेजके मजीठिया–भवनका शिलान्यास करना अपना सौभाग्य माना था। राघव–दासजीके सार्वजनिक जीवनीके शुरूसे कुशीनगरका प्राचीन वैभव और आंतर्राष्ट्रीय कीरत राघवदासजी चाहा करते थे। शताब्दि–योंसे पद-दलित तथागतकी पावनभूमी स्मशानकोभी मात कर रही थी। १९२१ का आन्दोलन अपनी चरम सीमापर था। बरहजका परमहंस अपनी तूफानी यात्रासे जनपदका कोना कोना छान रहा था। आपकी दृष्टी इस स्थानपर पडी। १९२३–२४ के बंदीवासमें रामधारी पाण्डेयजीके साथ कुशीनगरका जीर्णोद्धार था राघवदासजीका विचारविनिमय। १९२५ में लाला लजपत–राय और डॉक्टर सरोजिनीदेवी नायडूको कुशीनगरमें लाकर राघवदासजीने उत्थान किया। १९२४–२५ के दिनोमें अवस्था यह थी कि कुशीनगर एक निर्जन स्थान था। लोग बौद्ध यात्रियोंसे घृणा करते थे। राघवदासजीने जनतामें यह भावना भरी कि "भगवान् बुद्ध हमसे इतर नहीं थे। इसलिये आपको माननेवाले फरियान, सोनुत्सांग, रेशिग इत्यादि भिक्षु लोग हमारेही अंग हैं, हमारे भाई है। आपने अपनी ज्ञानकी प्यासको यहाँ बुझाया। भ्रमके दूर होनेपर पडोसी राष्ट्रोंके सहस्रो जिज्ञासु बुद्ध और विद्वान् लोग कुशीनगर आने जाने लगे और भगवान् बुद्धकी पूजा भी करने लगे। उन दिनों जो कुशीनगर वीरान था, वह संस्कृताचार्योंद्वारा सर्वतो प्रथम यहाँकी हिंदुजनताके संपर्कमें

आया। जनभावनाके जागृत होतेही राघवदासजीने महात्मा बुद्धके जीवनकी सर्वोपरि तिथि वैशाखी पूर्णिमाके अवसरपर "बुद्ध-जयन्ति" के रूपमें सार्वजनिक संमेलनका श्रीगणेशाय किया। मेला आरंभसेही सफल रहा। और वह २५०० वी बुद्धशतीका नया कलेवर धारण करके समस्त आशियाके समक्ष आया। वहाँ-पर हायस्कूल, माध्यमिक शाला, औषधालय, वाचनालय, पुस्तकालय आदिकी व्यवस्था राघवदासजीनेही कराई। आपने कुशीनगरकी तरह सारनाथमें भी शिक्षणसंस्थाएं खोली। कुशीनगर (कसया) डिग्रीकॉलेजमें आशियाकी भाषाएँ रखी गई, ताकि देशदेशसे आनेवाले विद्यार्थी अपनेको यहाँ विदेशी न समझें। आप चाहते थे कि यह कॉलेज आशियाके सभी राष्ट्रोंको निकट लानेमें साधन बने और विभिन्न आशियाई देशोंमें स्थित भारतीय दूतवासोंके लिये योग्य कर्मचारी तैयार करे और आशियाकी सरहद्दीतक एकताका प्रतीक बने।

प्रत्येक कमरेमें इसीलिये, किसीएक आशियाई राष्ट्रकी भाषाको पढने-पढानेकी व्यवस्था हो; उस कमरेमें भाषासे संबंधित देशका साहित्य उपलब्ध हो; देशके निवासियोंके रहन-सहन, वेशभूषा, रुचि, ऐतिहासिक-सांस्कृतिक-आर्थिक-धार्मिक तथा राजनैतिक विकास आदिसे संबंधित चित्र तथा अन्य दर्शनीय सामग्री एकत्रित हो; कमरेमें प्रवेश करतेही वातावरण, राष्ट्र-विशेषकी विशेषताओंका एक जीता-जागता चित्र उपस्थित कर दे। प्रत्येक कमरा एकेक आशियाई राष्ट्रविशेषके इतिहास, समाज एवं संस्कृतिका अजायब घर बने। यह थी राघवदासजीकी महत्त्वाकाँक्षा। आज कल तो बौद्धकालीन पालीभाषाका पठन-पाठन, सांस्कृतिक आदान-प्रदान स्थानीय विद्यामंदिरोंकी अपनी वस्तु है।

(३) बाबा राघवदास तकली, चरखा, श्रमदान, बढ़ईगिरी, सफाई, ग्रामसेवा, (टेनिंग) चमडेकी सफाई, कागज बनानेकी कला इत्यादि कार्योंको शिक्षणकार्यसे संबंधित कर शिक्षणके

क्षेत्रमें उत्पन्न होनेवाले समस्त दूषकोंसे समाजकी रक्षा करना चाहते थे। गोरखपूर–विश्वविद्यालयसे ग्रामीण विश्वविद्यालय बनानेमें आपका यही उद्देश था। शिक्षित व्यक्तिओंकी बेकारी देखकर आप खिन्न हो जाया करते थे। अपने जीनेकी हालत जिसे आसान नहीं या स्वाभिमान रखनेके कारण अनशन आनन्दसे सहन नहीं हो सकता, वह सुसंस्कृत तो नहीं, सुशिक्षित भी नहीं। वह खाली शब्दमुद्रित है। राघवदासजी नहीं चाहते थे कि शिक्षाप्राप्तिके बाद शिक्षित व्यक्ति प्रश्नसूचक चिन्ह अथवा समस्यास्वरूप बनकर समाजपर लढा रहे या समाजके सिरपर एक शापस्वरूप बोझ हो जाये।

गान्धी–अर्विन इकरार (१९३१) के बाद जब महात्मा–जीने सहयोगिओंसे कहा कि "गाँवमें जाओं।" और स्वयं सेवा–ग्राममें रहे, उसी समय आपने राघवदासजीको साथमें लेकर दक्षिणी भारत तथा आसामका दौरा किया। उसके बाद राघव–दासजीने आश्रम बरहजको भिन्न भिन्न ग्रामोद्योग–धन्धोंका शिक्षणकेंद्र बनाया। १९३५ के काँग्रेसजयन्तिके सुवर्णमहोत्सवी अवसरपर राघवदासजीने श्रीकृष्ण–इन्टर कॉलेज खोलते खोलते उसमें बस्ती गोरखपूर, आझमगड, बलिया और गाझीपूरके जिलाबोर्डोके तीनसौ अध्यापकोंको कताई–बुनाईमें कैंप खोलकर दीक्षित कराया; तां कि वे अपने अपने शिक्षणवर्गमें या शिक्षण–केंद्रमें या स्कूलोंमें बच्चोंको कताई–बुनाई सिखा सकें।

१९३६ में राघवदासजीने आश्रमपर श्रीसीताराम–ग्रामो–द्योग–विद्यालय स्थापित किया जिसमें दिया–सलाई, साबुन, बटन, कागज, गुण, चमडा, लकडीके काम, तेलघानी, मिट्टीके बर्तन बनाना, आदिमें युवक शिक्षित–दीक्षित किये जाते थे। राघवदासजीने यहाँके अनेक नवयुवकोंको कलकत्ता, मद्रास आदि दूर दूर जगहोंपर भेज कर भिन्न भिन्न कुटीर–उद्योगोंमें दीक्षित कराया।

ग्रामोद्योग–विद्यालयके साथ साथ राघवदासजीने बरहजमें एक ग्रामसेवक–विद्यालय खोला जिसमें ग्रामसेवक तैयार किये जाते थे और हैं। इसके प्रधान आचार्य श्री रणवीर शर्मा अेम्. अे. थे जिन्होंने राघवदासजीसे प्रभावित हो कर इसी कार्यके लिये अपना जीवनदान दे दिया। इस ग्रामसेवक–विद्यालयसे सैंकडो दीक्षित युवक निकले, जो सभी गांवों आश्रमकी सेवोओंमें ले लिये गये। १९४० तक आश्रमपर ग्रामोद्योगकी बडी ही चहलपहल थी और बच्चेबच्चेमें स्वदेशी वस्तुओंकी प्रति प्रेम बढता रहा। राघवदासजीके इन कार्योंके प्रति जनतामें अपार उत्साह देखकर गोरखपूर और देवरियाके अंग्रेज अधिकारी अमाप घबराने लगे और राघवदासजी उनके आँखोंमें खटकने लगे। १९४२ के आंदोलनमें सभी कुटिरोद्योगोंका सत्यानाश कैप्टन मूरने आश्रममेंही करा दिया।

तो भी १९४६ जुलाईमें बन्दीखानेसे बाहर आनेके बाद राघवदासजीने अन्य कार्योंके साथ साथ, सबसे पहले बनकटा स्टेशनके रामपूर बुजुर्गमें कुटीरोद्योग–दीक्षा–शिबिर खोला। पेड खतम करनेके बाद जादह जोरसे फलफूल देता रहता है। यह अनुभव यहाँ आया। इसके अतिरिक्त स्रावस्ती आश्रम, महू आनंदन, गोरखपूर, कुशीनगर, बरहज, सेवापुरी, रवीन्द्रनगर, देवरियामें ग्रामोद्योग–केन्द्र खोला जिनमें बेतका टोकरी, कुर्सी अथ अन्य सामान तैय्यार किया जाने लगा। आश्रम बरहज के पास मुहाव गाँवमें कम्बलका उद्योग आजकल भी अधिक होता है। वहाँकी कम्बल राघवदासजी इस्तेमाल करते थे और ग्रामोद्योगका प्रचार और शिक्षा कृतिसे देते थे। गांवके निर्धन लोगोंमें घुलमिलकर काम करनेवाला कर्मठ सेवक होनेसेही उत्थान प्रभावी होता है। यही थी राघवदासजीकी आचारशील शिक्षा। आप कहते थे कि भारतका उत्थान तभी होगा जब कुटीरोद्योग, छोटे छोटे धन्दे चलाये जायेंगे। क्योंकि इससे बेकारीकी बडी भारी समस्या हल हो जायेगी।

रवीन्द्र आश्रमकी संस्थापना नये आर्थिक जमानेकी निशाणी है। १९४६ के जुलाईमें एक बरहजसे कुशीनगर और वहाँसे पडरिना राघवदासजी आये। पडरिनासे लगभग तीन मील दक्षिण, कसया–पडरिना रोडपर, घने पेड और जंगलोंमें आच्छादित धूस आपको दिखाई पडा। यह स्थान नगरोंके कोलाहलसे दूर अपने शांत वातावरणमें, राघवदासजीको मोह लिया। यहाँ एक प्राज्ञ–पाठशाला चल रही थी जो तुलसीदासजीके नामपर थी। राघवदासजीको यहाँ एक शान्ति–निकेतनसी संस्था स्थापित करनेकी प्रेरणा हुअी। आपने यहां एक सहकारी समितिकी स्थापना की। रवीन्द्र–सहकारी–भण्डार खुला जिसने यहाँके लोगोंकी काफी सेवा की। आश्रममें प्रौढ शिक्षा, कताई, बुनाई, बीजभण्डार, कर्ज–देनवाली समिति, औषधालय आदिकी स्थापना हुअी। यहाँ स्थानीय उद्योगोंमें बेतसे कुर्सी, मेज, टोकरियाँ आदि बनानेका काम खोला गया।

उसी १९४६ की दुसरी भी एक घटना अविस्मरणीय है। देवरिया जनपद अपनी बावीस लाख की आबादीके साथ गोरख–पुर जनपदसे विलग हुआ। अक्षयतृतीयाको परशुरामधाम, सोहनागमें श्री सुभाषचंद्र बसूके अतिविश्वासपात्र सहयोगी बनारसके श्री देवनंदन दीक्षितकी प्रेरणासे राष्ट्रसेवियोंकी एक सभामें जनपदको पूर्णरूपेण सँवारनेका संकल्प हुआ। उन दिनों पूरजनपदमें एक सरकारी हायस्कूल था और तीन अनुदानप्राप्त हायस्कूल थे। अत एव एक इन्टरकॉलेजकी आवश्यकता दीख पडी। उसी साहसके बल बाबा राघवदासजीके जनपदकी सेवाओंको अमरता प्रदान करनेके लिये १५ जुलाई १९४६ को स्थानीय बुद्धिजीवियोंकी देखरेखमें, एक धर्मशालामें, बिना किसी उपकरणके, वह संस्था प्रारंभ कराई। शिक्षाविभागकी महती, उदारता और प्रबन्धकोंके अविरत प्रयत्नोंसे पचीस हजार रुपयोंके व्ययसे बीस एकड भूमि १६ मार्च १९५२ को प्राप्त हो सकी। २० मार्च १९५२ को अपनी पैदल यात्राके अवसरपर सन्त विनोबाने उस

संस्थाका शिलान्यास किया। इस संस्थाके चार उद्देश हैं। शिक्षाका व्यावहारिक और प्रयोगात्मक रूप, स्नातकोंका स्वावलंबन, पिछडी जातियोंके बच्चोंका निःशुल्क शिक्षाप्रदान और सभी विद्यार्थिओंको छात्रावाससे महर्षिकुलप्रणाली देकर उनको सच्चे नागरीकत्वका प्रदान। यहाँसे ऐसे विद्यार्थी सुधारे जा चुके, जिनके जनकण्टकोंसे जनपद त्रस्त था। आज वे जिम्मेदार नागरीकोंमें अपना स्थान रखते हैं। इस बाबा राघवदास-कॉलेज देवरियामें श्रमपर कोई व्ययही नहीं है।

वैदिक संस्कृतिके अभिमानी होनेके कारण वैदिक पंडितोंकी परंपरा चलानेके लिये १९२७ में राघवदासजीने सोहनागमें वेदविद्यालय शुरू किया। विश्वधर्मका बीज वैदिकधर्ममें देखकर राघवदासजीने गोरखपुरमें आर्यधर्म-प्रचार-समिती स्थापन की जिससे हिंदु, बौद्ध, शीख, जैन मतोंका समन्वय करके अभ्यास करनेवालोंके लिये एक परीक्षाकेंन्द्र भी शुरू किया। मानो,

"सर्व-धर्मान् स्वयं पूज्य मानव्यं शरणं व्रज।" था राष्ट्रीयतासे विकासवादी संदेश राघवदासजीका।

राघवदासजीके सामने शिक्षाक्षेत्रमें लोकमान्य तिलक, नामदार गोखले एवं लाला लजपतरायके आदर्श थे। विशाल भारत एवं विशालआशियाका स्वर्णिभ चित्र आपने मनही मनमें खींचा था। इसीलिये कार्यकर्ताओंको आप प्रेरणा देते थे। कठिनाईकी चर्चा सुनकर आप हँसकर उसे उपेक्षित कर देते। पासमें रखे हुअे झोलेको टटोलते, यदि कुछ पैसा होता तो तुरन्त दे देते, अथवा पैसा न हुआ तो पैसेवालोंके पास पत्र लिख देते। राघवदासजी समस्याका समाधान कर देते थे। अपने कार्यकर्ताओंका नैतिक बल राघवदासजी सदैव बनाये रखते थे। आपकी शैक्षिक, सांस्कृतिक सेवाअें गिनी नहीं जा सकती। मानवी और मानव्यके विकासका साधन शिक्षाही है। इस प्रमेयकी पूर्तिकी मूर्ति राघवदासजीका प्रयत्न-प्रसाद था। इसी प्रयत्नवादसे आपने

शिक्षित और दीक्षित युवकोंमे ऐसी प्रेरणा दी थी कि वे आपकी शिक्षा संस्थाओंमें पेट बाँधकर–भी काम करनेमें मजाक लेते थे। खाली डालरोटीकी तरतूद होनेपर और जेबखर्चीके लिये हरमास तीन तीन रुपयोंका चंदा मिलनेपर वे संतुष्ट रहे और यज्ञमय जीवनसे गुरुपदकी प्रतिष्ठा बढा रहे। राघवदासजी इन सब शिक्षकोंका समाचार हररोज पैदल जाकर लेते रहे और कभी कभी रातके दो बजे तक जागृति रखकर उनकी कमीकी पूर्ति कैसी हो जाये, यही चिंता भी करते रहे। फलतः गाँवगाँवमें जन–जागरण हो रहा, जिससे राष्ट्रके चैतन्यका प्रत्यय हर ओरसे आ रहा। पेडका छायामण्डल या सीधीसुधी झोपडी कितनीहि शाला–प्रशालाओंका शुभ आरम्भस्थान हो चुकी थी या है। खुद्द देवरिया जिलेमें राघवदासजीने चालीस प्रशालाएं (हायस्कूलें) शुरू की, जिनमेंसे कतिपय इन्टर कॉलेजेस बन रहीं हैं।

(४) गोरखपूरमें अपने ब्रह्मचर्याश्रमके ब्रह्मचारीओं द्वारा १९२१ में महात्मा गांधीजीका अभिनंदन राघवदासजीने किया। महात्माजी गद् गद् हो गये। १९२१ के जुलाईके प्रथम सत्या–ग्रहमें राघवदासजीको एक वर्षकी कडी कैद हुअी। आप जनपदके स्वतंत्रतासंग्रामके सेनानी थे। आपके साथी राजकीय क्षेत्रमें थे श्रीरामधारी पाण्डे, अवधनारायण लाल मुखतार, अमीनसिंग, अनमोलसिंग, दशरथ पंडित, द्विवेदी, रघुपति सहायक "फिरकू" बिंदवासिसिजी पंडित वकील, भगवती पण्डित, दुबे, शिवनलाल सक्सेना, ठाकूरसिंग हसनसिंग, छन्गूर त्रिपाठी, सियारामशरण, लक्ष्मीनारायण सिंग, रामनाथ रोंगडा और "जानकी–कुल" के सभासद जो राजनैतिक पद्यावली किसानोमें गाया करते थे। उन्हीके साथ राघवदासजीने असहकार–आंदोलनका ऐसा काम उठाया कि उसे डर कर राघवदासजीको सरकारने बन्दीवान कर दिया। खादी पेहननेसे सभी राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें बरहज आश्रमवासी राघवदासजीके नेतृत्वमें आस्थापूर्वक भाग लेते थे।

राघवदासजीका प्रभाव १९२३ में भी ऐसी था कि उत्तरप्रादेशिक राजनैतिक संमेलन जब गोरखपूरमें हुआ तब स्वागताध्यक्ष राघवदासजीके कारण जनता उस संमेलनमें उमड पडी। ग्रामीण जनोंकी असीम श्रद्धा आपपर थी। सारे देशमें आझादी प्राप्त करनेकी नवचेतनका संचार हो चुका था। अंग्रेजी शासनकी अत्याचारोंसे जनता ऊब चुकी थी। ज्यों हो, राघवदासजी जेलसे निकले, जनताने फिर आपके आवाहनका स्वागत किया। जभी १९२२ में गान्धीजीका सत्याग्रह-आंदोलन चल रहा था कि चौरीचोरामें ५ फरवरी १९२२ रोज सरकारी अधिकारिओंके अमानुषिक व्यवहारके कारण भयंकर भाण्ड हो गया। २१ सिपाईयोंसह एक थानेदार खेदडकर आग लगा दी। राघव-दासजी अपने ११९ अनुयायोंसहित गिरफ्दार कर लिये गये। हथकडी और बेडियोंकेसाथ राघवदासजीको तनहाईमे रख्खा गया। कारण राघवदासजीने महात्माजीके सलाहसे चौरीचोरामें एक व्याख्यान दिया था। सरकार समझ चुकी थी कि राघवदास और गांधीजी चौरीचोराके अत्याचारोंकी स्फूर्ति है। महात्माजीने करबंदीका आन्दोलन स्थगित किया। पंडित मालवीय राघव-दासजीको मिले और दिल्ली असेम्ब्लीमें चौरीचोराका प्रश्न उपस्थित कर रहे। एक वर्ष लगातर पूज्य पं. मदनमोहन मालवीयजीने इस मामलेकी पैरवी की जिसमें १९ आदमियोंको फांसीकी सजा मिली थी और शेषको कालापानीकी सजा हुअी थी। लेकिन सभी छोड दिये गये। राघवदासजीका यह प्रभाव देखकरब्रिटिश सरकारकी इतराजी आपपर सदाके लिये हो चुकी।

उसके बाद १९३० में बडा राजकीय आन्दोलन हुआ। बीचमें राजकीय काँग्रेसी दलोंमें समझौता होकर "स्वराज्य पक्ष" की स्थापना हुअी थी और विधानसभाओंके अंदर भी स्वराज्यकी लढत देनेका निर्णय हुआ था। यह लढत विठ्ठलभाई पटेल, पंडित मालवीय और पं. मोतिलाल नेहरुजीने ऐसी दी कि जब सर मालकम हेलेने मध्यवर्ती असेम्ब्ली छोडकर पंजाबकी गव्हर्नरी

स्वीकार ली, तब उनके मुँहसे उद्‌गार निकले कि "अभी अच्छा होगा, कि मैं पटेलपंडितजीके हमलोंसे मैं अपनेको बचाया।" परिणामतः दूसरी भी एक विजय भारतियोंको मिल गई। माँटफोर्ड सुधारणाके आगे भारतमें अंग्रेज कैसा चले और लोगोंको क्या हक देना चाहिये, इस बाबतका जाँच करनेके लिये १९२७ में सायमन कमिशनकी नियुक्ति हुअी मगर उसका बहिष्कार भी भारत देशने लोकोत्तर किया। इतनाही नहीं, राजकीय विचारधारोंका एक मेल करके काँग्रेसने सरकारको "नेहरू रिपोर्ट" दिया, जिसमें वासाहतिक स्वराज्यकी माँग तुरन्तही भारतके सब राजकीय दलोंने एक दिलसे की थी। अंग्रेज सरकारने जब नेहरू-रिपोर्टकी दिक्कत नहीं की, तब १९२९ सालके अन्तिम रोज काँग्रेसने भारतका राजकीय ध्येय "संपूर्ण लोकशाही स्वातंत्र्य" पुकार दिया। उसकी परिणती करनेके लिये महात्मा गांधी जब उधर १९३० में दाण्डीयात्रामें नमक-कानून तोडने गये, तब इधर छपरा जिलेके अंतर्गत मोरे नामक स्थानपर पहुँचकर शासनाधिकारिओंद्वारा गांधी टोपीकी निंदा एवं निरादरके विरुद्ध राघवदासजीने जन-आंदोलन छेड दिया। उसके ऊपरभी १९३० में राघवदासजी बरहजसे आपके सहकारी लेकर परौणामें नमकका कानून तोड रहे और तीन वर्षोंकी कडी बंदीमें लौट गये। बीचमें बसन्तपूर-धूसी विद्यालय बडा पडाव था। यहाँभी गैर कानूनी नमक बना गया। बसन्तधूसी स्वतंत्रता-आन्दोलनका गोरखपूर जिलेका उसी तरह केंद्रस्थान था जैसे विद्यापीठ काशी उत्तर-प्रदेशका रहा है।

१९३३ में राघवदासजीका स्वागत हजारों लोगोंने किया। बन्दीखानेमें आपको पागलोंके बीचमें रख्खा गया था। लेकिन सरकारके माफक जनता आपको पागल नहीं समझी। जब सन १९३७-३८ में काँग्रेसने चुनावका बिगुल बजाया, तब राघवदासजी झोली लिये, मैदानमें आये। उस समय बडे बडे जमीनदारों, रियासतों, रायबहाद्दूरोंका बोलबाला था। उनके आतंकसे लोग

काँपते थे। राघवदासजी अपनी टोलीके साथ निकल पडे। गाँव-गाँव तुलसीपत्र और निमंत्रण बँटने लगे। राघवदासजीने पहली तीनसौ मीलकी पदयात्रा उस समय की। चुनावके दिन जनताने अपने दरिद्र-नारायणका स्वागत खुले दिलसे किया। काँग्रेसकी बहुत भारी संख्यासे जीत हुअी।

काँग्रेसका मंत्रिमंडल भी राज्यराज्यमें बन रहा।१९३७ के जुलाईसे काँग्रेसका कारोबार भारतीय कारोबार हुआ। कारोबारपर १९३५ के कानूनसे गव्हर्नरकी इज्जती लहर-सत्ता चला सकती थी। मगर जितना हो सके उतना स्वातंत्र्य अबाधित रखनेका संकेत प्रांत-प्रांतके गव्हर्नर और बहुसंख्यांक पक्षके नेताओंके बीच मंजूर हुआ था। इस संकेतसे नामधारी लोकशाहीका कारोबार ऐसा शुरू हुआ कि उससे सच्ची लोकशाहीका विकास हो सके। किन्तु १९३९ में जर्मनीके हिटलरने दूसरे जागतिक युद्धका ढोल-नगारा बजा दिया और भारतीय साम्राज्यके धनी जो ब्रिटिश लोग थे, उनके राष्ट्र इंग्लंडने जर्मनीके खिलाफ रणांगणमें नौबत बजाई। भारतीय देशभक्तोंके सामने प्रश्न खडा हुआ कि ब्रिटीश साम्राज्यको मदद करे या न करे। जर्मनीकी विजय कोई भी न चाहता था। अंग्रेजी साम्राज्यकी मदद करनेसे स्वातंत्र्यके बारेमें अगले पदका फायदा हो या न हो, मानवी मन हिंसाकी शिक्षासे मानवताको भूल जाता है, यह स्खलन सुस्पष्ट था। तो काँग्रेसश्रेष्टी इस निर्णयपर आये कि ब्रिटिश साम्राज्य और उसका यहाँका कारोबार विनासहकार छोड दिया जायेगा और युद्धमानोंकाही विरोध करनेके लिये वैयक्तिक सत्याग्रहका यज्ञ काँग्रेससे चला जाये।

तो १९४० में वैयक्तिक सत्याग्रहके आंदोलनमें भाग लेकर बाबा राघवदासजी बन्दी हो गये और १९४२ जुलाईमें बाहर आये। राघवदासजीने तब देखा कि क्रांतिकी चिनगारी धीरे धीरे धबक रही थी। ८ ऑगष्ट १८४२ रोज बम्बईमें ऑल इंडिया

काँग्रेस कमेटीने "जब छोडो हिंद" का प्रस्ताव किया, राघवदासजी "गुप्तचर" बन गये।

राघवदासजीका १९४२ का कार्य ऐसा तेजोमय हुआ, जिसे देखकर समस्त काँग्रेस-कर्मी भी स्तब्ध रह गये। बरहजसे दस मीलपर मधुवन तांवका एक गांव है। वहाँ एक संस्कृत पाठशाला थी। उसके छात्र पढिक पंडित होते हैं। कर्तृत्वशाली नहीं होते। लोग और सरकारकी भावना ऐसी थी। मगर "चलेजाव" का आन्दोलन शुरू होतेही उस संस्कृत पाठशालाके दो छात्र राम सुंदरशास्त्री और मंगलदेव शुक्ल तथा ऋषी मधुवनका पोलिस-थाना जलाकर बैठे। सरकार गरम हो चुकी। पाठशालाका कब्जा करके उसकी नगद और कागज जप्त भी किये। इतनाही नहीं, उसका मकान भी मातिमोल कर दिया।

वैसाही सारे देशमें तहल्लका मच गया। अंग्रेजोंने भी अपनी पूरी शक्तिसे देशवासिओंको कुचलनेका प्रयास किया। फरार राघवदासजी न मिलनेसे, आपकी गिरफ्दारीके लिये सरकारने ईनाम रख्खा और आवश्यकता पडनेपर गोलीतक मार देनेका आदेश दे दिया। सरकारको शंका थी कि आप वेश बदलकर घूमते रहे हैं। लेकिन यह सब मिथ्या प्रचार था। राघवदासजी रात्रिमेंही अधिक तर चलते थे। ट्रेनमें उपर सामान रखनेवाले स्थानपर सो जाते थे। आपको साधु समझकर सब छोड रहे। आप दो वर्ष बाहर रहकर काम करते थे। उत्तर-प्रदेशके पूर्वी जिलोंमें विद्रोहकी ज्वाला धधकी। तबसे राघवदासजीने अन्य प्रांतोंका भी दौरा किया।

विशेषतः राघवदासजीने दक्षिण भारतका दौरा किया और अंग्रेजोंको भारत छोडनेको मजबूर कर दिया। उस आन्दोलनमें राघवदासजीका महाराष्ट्रीय स्वरूप सामने आया। सन १९४३ में आप प्रतिदूसरे मास काशी आते थे और प्रायः हरिश्चंद्रघाटके पास ऊंचे मकानमें अथवा श्रीमती सज्जनदेवी महतोतके यहाँ

निवास करते थे। वहाँसे पूछतपास लेकर जो इन्तजाम करनेकी वह कर लेते–देते थे। परंतु जनपदका गरीब मानव पुलीसको खबर देनेका कुकृत्य नहीं कर सकता था। उस स्थितिमें न केवल जेलमें बंद कार्यकर्ताओंके निःसहाय्य पडे परिवारवालोंकी खोज–खबरही राघवदासजी लेते रहते थे। बरन् गाढोंमें पडे कितनेही परिवारोंको गुप्तरूपसे सहाय्यता भी पहुँचाते रहते थे।

पर अतिश्रमसे घायल होकर राघवदासजी बीमार हो गये और पूनामें अपने घरमें अपनी भाबीकी देखभालमें रहने लगे। भांजा राजाराम कुलकर्णी (कन्हाडका) यहाँ सेवाशुश्रुषा कर रहा था। उसने राघवदासजीके बचपनमेंसे हुअेले दोस्त आत्माराम पाठकजी जैसे स्नेहिओंके साथ आपकी भेट भी करवाई। निसर्गोपचारके वास्ते मसाज करनेवाले शास्त्रज्ञ अपना अपना कर्तव्य करके हर रोज आते जाते थे। मगर उन सभ्योंको या पुलिसवालोंको पता भी नहीं था कि एक साधु मूर्तिमें बाबा राघवदासजी, जिनके खोजमें सरकार थी, जैसे थे वैसेही रह चलते थे।

बीमारीसे छुटकरा होनेके बाद राघवदासजी फिर अपनी सेवाप्रणाली चलाते चलाते, घूमते रहे। आपका समाधान था कि जनसामान्य देशकी आझादीके लिये आतुर है, बलि चढनेको चाहता है।

देशमें आझादीकी लढाई जोरोंपर थी। बडे बडे देशभक्त ब्रिटिश सरकारके मेहमान बन चुके थे। जो बचे थे वे लुक–छुपकर दिन बिता रहे थे। साथही वे प्रयत्नशील थे, कि इस लडाईको और तीव्र बनाया जाय। प्रेसअॅक्टके प्रहारसे समाचार–पत्र बंद हो चुके थे। जनतामें जागृति बनायेरखनेके लिये गुप्त प्रकाशनोंका सहारा लिया जा रहा था। काँग्रेसके कार्यक्रमोंको प्रचारित करनेके लिये भी उसी मार्गका अवलंब किया गया। ऐसाही एक प्रकाशन था "रणभेरी"। बनारसमें रहनेवाले पराडकरजीसे यह प्रकाशन निकलता था। राघवदासजी यहाँ

रहकर भिन्न भिन्न लोगोंसे मिलते थे और लडाईकी योजनाअें बनाते थे। आपके लिखे हुअे कितनेही संदेश रणभेरीमें प्रकाशित हुअे। आसेतु–हिमाचल घूमते घूमतेही राघवदासजी सत्तान्तरकी क्रांतिका दीप जलाते रहे। पर १९४४ में जब महात्मा गान्धी–जीका आदेश प्रसिद्ध हुआ कि कोई गुप्तचर बाहर न रहे, राघवदासजी तुरंत प्रगट हुअे और लखनौके चार बाग स्टेशनपें पकड गये। आपको दो बरसकी सजा दी गई और पागलोंके बीचमें रख्खा गया।

१९४६ में दूसरे जागतिक महायुद्धकी शान्ति होनेके बाद, नये चुनावसे काँग्रेस फेर अधिकारारूढ हुअी और देहल्लीमे इंटिरिअम गव्हर्नमेंट बन गया। पंडित जवाहरलाल नेहरू आश्रम पधारे और दुःखितदलितोंका समाचार लेते हुअे राजकीय आंदोलनोंमें आश्रमसे जो उत्थान मिल गया था उसका अभिनंदन भी कर रहे। नेत्रोंमेंसे आँसू बहते थे। पंडितजी बोले "अगर बाबाजी बाहर होते तो मुझे पूर्वी जिल्होंका दौरा करनेकी जरूरत नहीं पडती।"

दो बरसोंकी सजा पूरी काटकर राघवदासजी १९४६ में बाहर आये। शरयूके प्रवाहपर नावोंका पूल बनाया गया आपके स्वागतके लिये। पाँच लक्ष लोगोंने आपको अभिवादन किया। फेर एक बरसके अंदर १९४७ में भारतकी आझादीका अवतार हुआ। तभीसे काँग्रेसदलकी विकासयोजनाअें यशस्वी करने–करानेकी कोशीश राघवदासजीने संघटककी माफक चलाई। "अनाजकी पैदास अधिकाधिक करो"। आन्दोलनमें जी लगाकर राघवदास–जीने "कुन्ना खरेदो और पुख्खा खुदो।" आन्दोलनको चालना दी।

महात्माजीके स्वर्गारोहण (३० जनवरी १९४८) के पश्चात् काँग्रेसका मार्ग निराला हो गया। सन्त राघवदासजी काँग्रेसके सभासद और शिस्तबाज स्वयंसेवक होनेके कारण, आपको

अभय–राघव–मंदीर

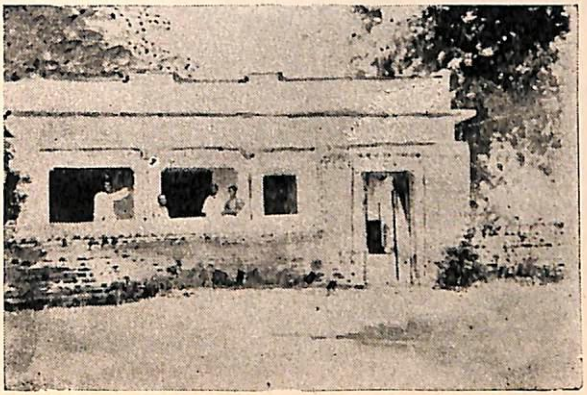

गुफा

जमीनपर बैठे हुए बाँए से दाँए-श्रीनिवास, शकुंतला, व्यंकटेश, नारायण.

कुर्सीपर बैठे हुए बाँए से दाँए-श्रीमती तारा देवी, श्रीमती यशोदा देवी (माँ के गोद में बाबा राघवदास) सौ. गोविंदताई (राघवदासजीकी फूफी) और कुटुम्बकी दो अन्य महिलाएँ।

खड़े हुए बाँए से दाँए-प्रथम दो कुटुम्ब के सदस्य, श्री शेषोजी (बाबाजीके पिता)।

काँग्रेसका अनुशासन मानकर आचार्य नरेंद्र देवसे लढ़ना पडा। अपनी कार्यपद्धति और रहनसहनसे मंत्रिमण्डलको चकित करनेके लिये श्रमदान, जलाशयजीर्णोद्धारकी ओर कारोबारका होकायन्त्र फिरानेके लिये राघवदासजी हेतुतः फैजाबाद तरफसे विधानसभामें चुन गये। वहाँ आप मंत्रिमंडल या काँग्रेसी श्रेष्ठीके दबावसे नहीं दबते थे। जभी सरकारने "कोल्हु"–कर लगा दिया, राघवदासजीने इस्तिफा देकर विधायक सेवाका आसर किया। उसके पहले आप ३ फर्वरी १९५० को शहाजानपूरमें सत्याग्रह करनेका निश्चय करके सरकारपर टूट पडे। सरकार विवश होकर कानून वापस ले ली। यह किसानोंकी सरकारपर विजय थी। सरकारको अन्यायी नहीं बनने देंगे, ये थे राघवदासजीके शब्द। "सरकारसे नेतातक किसीको अन्यायी नहीं बनने देंगे, ऐसी वृत्ति धारण करनेवाले दो–चार नवजवान भी यदि मुझे मिल जायें, तो सरकारको हम दिल्ली और लखनौमें चैनसे नहीं बैठने देंगे; उन्हें गाँवोंमें आना पडेगा।" राघवदासजी ग्रामस्वराज्यकी चर्चा करते करते बराबर कह देते थे।

हकीकत १९५१ की है। बालिया जिलेमें एक क्षेत्र कम्युनिस्टोंका गढ़ बन गया था और उन लोगोंने उस गाँवको मास्को नाम रख्खा था। राघवदासजी वहीं जम गये और तबतक नहीं हटे, जबतक उसका नाम बदल नहीं दिया गया। बालियाके बाहिरनाला प्रदेशमें सदाके लिये अनाजकी कमी है। दुकाळसे लोगोंको बचानेके लिये सरकारने वहाँ पावनापाँच मील लम्बीका एक "कॅनाल" बनानेकी योजना की। मगर एक या दूसरे कारणसे वह योजना पूरी ना हुअी। देरीसे लोग नाराज हुअे। इस नाराजीका फायदा उठानेकी कोशीश जीजानसे कम्युनिस्ट कर रहे। गड़बड़ मच रही। खून बहा। कोई समाजसेवक वहाँ जानेका और जनतामें मिल जुल–जानेका, रहनेका धाडस न कर सका। पर राघवदासजी वहाँ पहुँचे। आपने एक जाहीर सभामें घोषणा की इस कॅनालके नऊ दिनोंमें सब ठीक ठीक काम होगा,

बनेगा। लोग आचरज करने लगे और स्वागतभी कर रहें। "ना कदापि" से देरी बहुत अच्छा, इतनाही अर्थ लोगोंके स्वागतमें था। कम्युनिस्ट सरकारपर टूट पडते पडते राघवदासजीकी कुचेष्टा कर रहे। तो भी राघवदासजी शान्तिसागर थे। धीरे धीरे आपने एक हजार आदमीओंको श्रमदान करनेकेलिये प्रार्थना की। लोगोंको समझाया कि सचमुच विचार करके व्यवहारतः सरकार कौन है? सरकार लोगोंकी सेवकसंस्था है। लोकशाहीमें तो लोगोंके चुनावसे बहुमतवाला पक्ष सरकार बनाता है और कारोबार चलाता है। अगर सरकार कारोबार बराबर न करे या व्यवस्था न रखे, या आयोजनका व्यवहार न करे, तो दोष अपने माथे हैं। कारण सरकारी कारोबारके सूत्रधार अपने प्रतिनिधि होते हैं। यदि प्रतिनिधि या सेवकगण काम न करे, प्रतिनिधि या सेवकगणकी नियुक्ति या चुनाव करनेवालोंकी गलती है, अदूरदृष्टि है या अपना मालिकका अधिकार चलानेमें कमजोरी है। इतनाही सिद्ध होता है। लोकशाहीमें मतदार तो मालिक है। इसीलिये, सरकार काम न करे तो उससे कराना या उसे बदलना लोगोंका कर्तव्य है। उसमें कोई कठिनाई हो, तो अपना काम अपने हाथोंसे करनेमें तो कोई हरगज नहीं? ऐसे काम करनेसे सेवकोंको या प्रतिनिधिको प्रत्यय मिलता है कि मालिक लाचार, अवलंबी या कमजोर नहीं। उसकी नाराजी एक दिन जन्मठेपकी सजा फर्मायेगी। श्रमदानसे काम करनेमें लोगोंका यह सामर्थ्य प्रगट होगा और सरकार शरमिंधी होगी। इस विचार-सरणीसे श्रमदानकी प्रार्थना करते करते खुद राघवदासजीने हाथियारसाधना लेकर कॅनल खुदनेका प्रारंभ किया। प्रवचनसे आचरण प्रभावी होता है। आस्ते आस्ते लोगोंका सहकार राघवदासजीको मिला और काम बढ रहा। आठ दिन गुजर गये। नववे दिनके सूर्यास्तके समय कॅनल पूरा हो गया और खेतों-खेतोंके सन्निध पानीका प्रवाह हो रहा। दीनोंकी सेवाके लिये जन्म व्यतीत करनेवाले भगवान् जीजस ख्राईस्टके जन्म दिवसपर

प्रभुकी दया जैसी पानी की वाहतूक देखकर लोग आनंदीआनंद करने लगे। राघवदासजीकी जय हुअी। तो भी राघवदासजी विद्याविनय-संपन्न थे। आप कृतज्ञतासे निवेदन कर रहे कि " उसमें मेरी जय तनिक भी नहीं। जनताजनार्दनकी सब जय हैं। जनताजनार्दननेही कॅनालका काम पूरा किया है। करनेसे कुछ भी होता है। यह उदाहरण दे दिया है जनताने। तो जनता की जय बोलो " राघवदासजीकी यह सेवा इतनी प्रभावी हुअी कि कम्युनिस्टोंने अपना मुख छिपाया और उत्तरप्रदेशके तत्कालिन पंतप्रधान श्रीगोविंदवल्लभ पंतजी राघवदासजीको त्रिवार धन्य-वाद दे रहे।

राजकारणके क्षेत्रमें या अन्य क्षेत्रमें अव्यवस्था, बेशिस्त या अराजक निर्माण करनेमें कला तो नहीं है। लोकशाहीके जमानेमें मतभेदका ही आदर करना आवश्यक होता है। क्योंकि संसारमें कोई आदमी या आदमीयोंसे बनी हुअी संस्था या चलने-वाला पक्ष अक्कलहुशारीसे परिपूर्ण नहीं हो सकता। साथ साथ इसका भी स्मरण आवश्यक है कि कौनसी भी तत्त्वप्रणाली तर्कशुद्ध हो या व्यवहारप्रभावी हो, उसका आचरणशुद्ध झँडा जितना ऊँचा रहता है, उतना ऊँचा रहनेका दिमाग शब्दा-वडंबरका प्रवचन या दूसरेके दोषदर्शनके पास नहीं रहता। इसके वास्ते मतस्वातंत्र्य और उसका विचार-आचार-स्वातंत्र्य लोक-शाहीमें मूलभूत हक है। उस हकका अंमल करनेमें सहकार देना और मतभेद या आचार-भेदोंमेही जो कोई सात्विक देशभक्तिका या तत्त्वशुद्धिका भाग होगा, उसका सन्मान करना हरएक स्वतंत्र देशके नागरीकका कर्तव्य है। उसकी जानकारी राघवदासजीके पास असीम थी। परिणामतः श्री लक्ष्मण बलवंत तथा अण्णा-साहब भोपटकरजीकी अध्यक्षतामें जब हिंदुमहासभाका अधिवेशन गोरखपूरमें हुआ, वातावरण तंग था और दंगलका संभव था। तब हिंदुमुसलमानोंकी तेढीसे गोरखपूर जिला काँग्रेस कमेटीके

अध्यक्ष होकर भी राघवदासजीने दक्षता ली कि महासभाके अधिवेशनमें कुछ विघ्न न हो।

यह क्या ? राघवदासजीको क्रांतिकारिओंसे भी बडा प्रेम था। उनकी हरएक प्रकारकी सेवा करनेको आप उद्युक्त रहते थे। पंडित रामप्रसाद बिस्मिलसे आपको गहरी सहानुभूति थी। भगतसिंग और चंद्रशेखर आझाद भी बरहज आश्रमपर आकर राघवदासजीकी सहानुभूति प्राप्त कर चुके थे। राघवदासजी कहते थे कि उद्देश्य सबका एक है। उसको प्राप्त करनेका ढंग भिन्न है। अतः हरएक प्रकारका आझादीका महत्त्व अंकन कर उसे प्राप्त करनेवाला व्यक्ति देशभक्त है। हमें उसके प्रति सहानुभूति रखनीही चाहिये। यही थी विशालदृष्टी राघवदासजीकी। महात्माजीने बेळगाँव काँग्रेसमें कहा था कि बाबा राघवदास जैसे थोडेसे सन्त मुझे मिल जाये तो भारतकी आझादी दाये बाये हाथका खेल हो जाय। क्यों कि राघवदासजी स्वराज्यको स्वधर्म जैसे महत्त्व देते थे और राजकारणके साथ अध्यात्मका सहकार चाहते थे।

(५) राघवदासजी मानते थे कि यह शरीर समाजका है, इसको समाजसेवामें लगा देनाही मानवका धर्म है। उस मानव-धर्मको राघवदासजी आचरणशुद्ध रखा करते थे। महामारी आ गई, बस, आपकी टोली निकल पडी। लाशें, जलाई जा रहीं है। बीमारोंकी दया हो रही है। सेवाके साथ दीक्षान्त भाषण भी चल रहा है ताकि सेवक घबडायें न।

किसीने कहा, फीसके बिना लडका नहीं पढ़ रहा है। बस, झोलीमें हाथ पड़ा, कुछ निकला और फौरन दे दिया गया। किसीने कह दिया कपडा नहीं है। बस, व्यवस्था तुरन्त हो गई। कोई नौकरीके लिये आया, चिठ्ठी फौरन लिख दी गई। इस सीधापनका लोगोंने नाजायज लाभ भी लिया। संसारका यह सार्वत्रिक अनुभव है, जो आसानीसे या विना अिज्जत कहके सेवा

करता है, उसे समाजमेंसे बहुतेरे लोग अपने घरके विनावेतन कर्मचारीकी धारासे गिनते है। निष्काम सेवाका गौरव ऐसाही हररोज चलता है। तो जो भलेपनकी कीरत उसे मिलती है, उसका मोल करना कठीण है। परंतु राघवदासजीको क्या? जो जैसा करेगा, वह वैसा फल पावेगा। एक बार राघवदासजी कहीं बाहरसे आये। अभी ठीकसे बैठे भी नहीं थे। तब तक किसीने कहा कि नूनखारके पास एक स्त्री तीन दिनसे बाहर नहीं निकल रही है। क्योंकि उसके पास पहननेका कपडा नहीं है, उसका पतिभी बीमार अवस्थामें है। बस! राघवदासजी उठ गये। खानेसे या आराम करनेसे पहले वह काम जरुरी है। कपडा लेकर उस गांवमें राघवदासजी हाजिर!!

किसानोंको तबतक सुख नहीं मिलेगा, जबतक उनके पास पर्याप्त गल्ला नहीं होगा। बस, अच्छी व्यवस्थासे बीज तैयार हो गये। सरकारसे लिखापढी शुरू हो गई। नयीं खादोंके बारेमें किसानोंमें चर्चा चलने लगी। नये ढंगकी ढेकुल बनने लगी। नये ढंगसे गुड बनानेके चुल्ले बनने लगे। सिंचाईके लिये पानीके ठीक व्यवस्थाके लिये नये कुअें खोदनेका आन्दोलन शुरू हुआ। पुष्कर खोदे जाने लगे। किसानोंमें चर्खा बढने लगा।

जब राघवदासजी १९५० में जलोदरसे बीमार थे, एक दिन एक देहाती आदमी आया। और अपनी दुःखद हालत कहने लगा। उसको गाँवके पटवारीने बहुत पीडा दी थी। बातें सुनकर राघवदासजी बेहद्द बेचैन हो गये। दूसरे दिन उसी गाँवका पटवारी मिलने आया। उसे देखकर आपका क्रोध बढ गया। बहुत कटु बातें पटवारीको सुननी पडी। उसीका कुछ नुकसान करना कराना आपके हाथमें था। लेकिन उसे पूर्ण समझाकर उसी देहातीका कार्य उसी पटवारीके हाथसे आपने पूरा कर छोडा।

जेलमें भी राघवदासजी हर क्षण कार्यरत रहते थे और सबके सुखदुःखमें भाग लेते थे। एक समय आपने मेहतरोंको भी

छुटी देकर पाखानोंकी सफाईका काम उठा लिया था। एक हरिजन डोम रामप्रसाद कैदीसे तो आपका ऐसा अपनत्व हो गया था, कि वह सदा आपके साथ रहता था। आप भी उसके विकासमें पूरे सहाय्यक होते थे। १९४४ में जब पागलोंके बीचमें आपको जेलमें रख्खा था, आपने पागलोंपरभी प्रभाव किया।

डाकू भी आपके पावन नामका सन्मान करता था। ग्रीष्मकी रजनी थी। घनान्धकार चतुर्दिक छाया हुआ था। आधी रातका समय। चारों ओर सन्नाटा। इसी समय दो तीन हट्टे कट्टे आदमी बरहजआश्रमकी कुटियाके सामने आये। उन्होंने आश्रम-वासियोंको पूछा-" परमहँसजी कहाँ है ? " उत्तर मिला " सो रहे हैं।" उनमेंसे एक आदमी बरहज आश्रमकी कुटियाके सामने आगे बढकर बोला- " मुझे आपका दर्शन करना है और जरूर करना है।" राघवदासजी जगाये गये। एक नाटे कदका अत्यन्त सबल व्यक्ति सामने आया। चरणस्पर्श कर और हात जोड कर बोला- " सरकार, हमारा नाम कोमल है। आपके दर्शनके लिये बडी दूरीसे आ रहा हूँ। मुझे पकडनेके लिये पुलीस हमेशा लगी रहती है। इसीलिये अधिक समय नहीं। यह लीजिये तिलक स्वराज्य-फंडका चंदा।" ऐसा कहते कहते सौं रुपये भेट किये। हात जोडा, चलता बना। राघवदासजी उन दिनों तिलकस्वराज्य-फंडके लिये रुपये एकत्र कर रहे थे। राघवदासजीके जाज्वल्य-मान व्यक्तित्वसे प्रभावित होकर गरीबोंको कभी ना सतानेवाला डाकू देशसेवाकी ओर उन्मुख हुआ।

सार्वजनिक जीवनके शुरूकी यह बात है। जब राघवदासजी कीरतके शिखरपर थे उसी वख्त भी आपकी सेवावृत्ति जैसी की तैसी थी। भारत स्वतंत्र होनेके बाद जिस समय पहली बार रेल्वे ॲडव्हायसरी बोर्डके सदस्य राघवदासजी हुअे, स्टेशनोंपर पानी पीनेकी व्यवस्था नहीं थी। एक बार राघवदासजी गोरखपूर स्टेशनपर गये। आपको मालूम हुआ कि यात्रियोंको गन्दा जल पीनेको मिल रहा है। राघवदासजी टंकी की ओर बढे। टंकी

४५ फीट ऊँचाईपर थी। आवेशमें राघवदासजीने टंकीपर चढानेका साहस किया और आप टंकीमें कूद पडे। टंकी महिनोंसे साफ नहीं की गई थी। उसमें कई इंच मोटी काई जम गई थी। राघवदासजीने टंकीकी काई अपने दोनो हातोंके अञ्जुलियोंमे ले लिये और ओ. टी. आर्. रेल्वेके जनरल मैनेजरके सामने दफ्तरमें रख दिया। जनरल मैनेजर दंग रहे और आपने तुरन्त टंकीकी सफाई करवाई। स्टेशन-कर्मचारी रेल्वे कर्मचारिओंसे उतना नहीं डरते थे, जितना बाबा राघवदासजीसे।

सन १९३२-३३ में भी वैसीही सेवा राघवदासजी करते थे। बरहज नोटिफाईड एरियाके पाखाने महिनोंसे साफ नहीं हुअे थे। उनमें बडे बडे कीडे पड गये थे। राघवदासजीने कर्मचारिओंको लिखा। फिर भी व्यवस्था नहीं हो सकी। एक दिन राघवदासजी आश्रमसे स्वयं चल पडे और पाखाना दोनों हाथोंसे उठा उठाकर फेकने लगे। लोग पैरोंपर गिरने लगे। फिर भी नहीं माने। पाखाना बजबज कर रहा था। राघवदासजी उसमें कूद पडे। आप पाखानोको तीव्र गतिसे फेकनेमें कितनी शक्ति खर्च करते है, यह देखकर लोग जहाँके वहाँमेंसे पाखाना उठाकर फेकने लगे। लखपतिओंने भी पाखाना साफ किये। पूंजीपतियोंकी स्त्रियों भी जनसमूहके बीच पाखाना साफ करती हुअी दिखाई दीं। महात्माजीको इसका पता समाचार-पत्रोंसे लगा तो आप गद् गद् हो गये। इसके बाद राघवदासजी भंगियोंके सरदार बन गये। १९३४ में लखनौ काँग्रेसमें झामभगतकी गोलके-साथ राघवदासजीको पाखाना साफ करते देखकर बंगाल, मद्रास आदि सब प्रांतोंके प्रतिनिधी चकित रहें। १९४८ में फिर देवरियामें पाखानोंकी सफाई राघवदासजीने की।

शान्तिप्रधान जीवनमें वैयक्तिक इज्जतका बडा भाव जो नहीं करता, वह समाजसेवक अस्मानी संकटकालमें समाजसेवा करताही रहेगा। राघवदासजीकी हयातमें १९३४ में पहली बाढ़ आई थी। छडसडाके पास मलौनी बांधके टूट जानेके कारण प्रलय जैसा दृश्य

उपस्थित हो गया था। राप्ती और शरयूके बाढ़से गोरखपूर और देवरिया जिले त्रस्त थे। गाँव डूब रहे थे और उनके निवासी जहाजोंपर लादकर सुरक्षित स्थानोंमें पहुँचाये जा रहे थे। कछार क्षेत्रका एक गाँव राप्तीकी धारामें विलीन हो रहा था। राघवदासजी गोरखपूरसे नाव लेकर गीताप्रेसके कुछ कर्मचारियोंसहित उस गाँवमें पहुँचे। गाँववाले दौडकर नावमें बैठ गये। इसी वख्त राघवदासजी एक बुढियाकी झोंपडीमें गये। आपने कहा– "माताजी, सब लोक चले गये, तुम क्यों नहीं नावमें चलती हो ?" बुढिया बोली– "हम नहीं जाइब, मरब चाहे जियब। जो हम चलीं त हमार चक्की कैसे चली ?" राघवदासजीने चक्कीके दोनों पाट सिरपर उठा लिये। आगे आगे बुढिया और पीछे राघवदास चार फर्लांग जाँतलिये चलकर नावपर आये। अलाहाबादके "लीडर" में अखिल भारतीय-सेवा-समितीके मंत्री श्रीभारतीने राघवदासजीकी प्रशंसा कृतज्ञतापूर्वक की।

सन १९३८ की भीषण बाढ़ उत्तरप्रदेशके पूर्वी जिलोंमेंही नहीं पूरे उत्तरभारतमें अद्वितिय रही। उस महाप्रलयमें देवरिया, गोरखपूर, बलिया, गाझीपूरमें छोटी गंडक, घाघरा और गंगाके किनारेके सभी गाँव पानीसे भर गये थे। पानी रातोरात इतना अधिक बढ जाता था कि लोगोंको घरदार छोडकर भागनेका भी अवसर नहीं मिलता था। हजारों नरनारी अपने भैंस और बैलोंकी पूँछ पकडकर बहते चले जाते थे। इस महान संकटमें राघवदासजी प्रतिदिन बरहजसे बडी बडी नावें खुलवाते थे। बबूतके पेडमें छ माह सालभरके बच्चे कपडोंमें बंधे हुअे डालोंमें लटक रहे थे। उनको नावोंपर उतारकर राघवदासजी रख लेते थे और उनको माँबापके मिलनेपर सौंपते थे। रातदिन राघव-दासजी घूमते रहते थे। हजारोंकी संख्यामें लोग बरहज आश्रममें लाये गये। दानरूप पैसा, चनाचावल, कपडा ला-लाकर बाँटा गया।

राघवदासजीकी यह सेवावृत्ति आपका स्थायीभाव बन रहा था। सन १९४७ में देशने अपनी राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। राघवदासजीने तय किया कि अब खुलकर काम करनेका अवसर है। आप जूट पडे। गोरखपूर-देवरियामें खादीका काम बढाने के लिये आपने दो लाख तीस हजार रुपये लोगोंके दान-स्वरूप इकट्ठा करके माननीय पंडित पंतजीके करकमलोंमें समर्पित कर दिये, जिसके फलस्वरूप इन जिलोंमें खादीका काम काफी पैमानेपर बढ गया है। राघवदासजी हरएक क्षेत्रमें जैसे व्रतस्थ थे वैसेही राजकारणमें। बचपनमें जो स्वदेशीका व्रत आपने लिया था, उसीका पालन अन्ततक आपने किया कि परिचित देखते रहे। आपने विदेशी चिनी छोड दी थी। काल-चक्रसे भारतमें स्वदेशी चिनी बनी जाती थी और है। पर जब-तक चिनीका कारखाना विदेशी यंत्रोंसे चलता है, तबतक भारतीय चिनी भी सौसे सौ टक्के स्वदेशी नहीं हो सकती। इसलिये राघवदासजी उसको खुद उपयोगमें ना लाते थे।

(६) बरहज आश्रमके पडोसका एक गाँव ऐतिहासिक है। कभी भगवान बुद्ध भी यहाँ आये थे। सन १८५७ के स्वतंत्रतायुद्धमें वहाँके कई लोगोनें भाग लिया था। उससे प्रभावित होकर राघवदासजी १९२० में सर्वप्रथम गाँवके एक ब्राह्मणकी श्रद्धासे और जिद्दपर गुफासे निकलकर उस गाँवमे आये थे। तबसे कई बार गये। एक बार अखिल भारतीय अछूतोद्धार-समितीकी तरफसे राघवदासजी अछूतोंकी पाठशालामें गये जहाँ आपके आदमी पढाते थे हरिजनोंको और सवर्णको। विद्यार्थिओंसे नगुआ नामका एक चमार लडका था जिसकी उम्र १६ या १८ होगी। वह ननिहालमें रहता था। वह स्वाभिमानी था। वह और उसके अध्यापक भीषण सत्यका एक युद्ध कर रहे थे। एक दिन नगुआके नानाका घर फूँक गया। "तुम्हारी पढाईमें आग लगे।" नाना क्रोधसे बोल रहा। राघवदासजीने कहा- "फूस का घर जला तो पक्का घर नागेन्द्रका भगवान् बनाएगा।"

नागुआ या नागेंद्रके में ठन गई। नौजवान था ही वह। राघवदासजीने उसे कलकत्ता भेजा श्रीनरसिंह तिवारीके पास। तिवारीजीने नागेंद्रको हिंदुविश्वविद्यालयमें सिलाईका काम सिखला देनेके लिये भरती करा दिया। वह हजामत बनाना भी जान गया। कई दिनोंके बाद नागेंद्रको बरहज भेजा गया। वहाँ राघवदासजीकी देखरेखमें वह रहने लगा। सिलाईकी उसकी दूकान खुली। वह सफल दुकानदार हुआ। नागेंद्र लोगोंकी आर्थिक सहायता करने लगा। इसी तरह अपकारका बदला उपकारसे चुकाने लगा। नागेंद्रने अपने घरमें ईंट लगाई। बरहजमें भी उसने अपने रहनेका घर बनाया। उसका नाना मूसराम हाथींपर चढाया गया। जिन्होनें नागेंद्रके पढनेमें बाधा दी थी उन्ही लोगोंने चकित निगाहोंसे देखा, राघवदासजीका आशीर्वाद क्या कर रहा था।

भूदानयज्ञमें सेवा अर्पण करनेके पहिले वाराणसीके विश्व-नाथमंदीरमें राघवदासजीने हरिजनोंका प्रवेश करा दिया। एक-लव्य या सत्यकाम जाबालीकी सन्ततीको आपकी कुछ फिक्र हो या न हो, राघवदासजी उनकी सेवा कर्तव्यबुद्धिसे कर रहे थे।

वैद्यनाथ-धाममें आचार्य विनोबा भावेने हरिजनोंके साथ जब मंदिरमें जानेकी चेष्टा की, पण्डोंने तीव्र विरोध किया। उस झगडेमें विनोबाजीको कुछ चोट भी लगी थी। इस समाचारसे सर्वत्र रोषकी लहर दौड पडी। बादमें शीघ्रही उस मंदिरमें स्वयं पण्डोंने हरिजनोंका स्वागत किया। बाबा राघवदासपर इसकी गहरी प्रतिक्रिया हुई। आपने सोचा कि यदि काशीविश्वनाथका मंदिर हरिजनोंके लिये खुला जाय, तो संपूर्ण देशमें हरिजनमंदिर-प्रवेशकी समस्या हल हो जाय। राघवदासजी इसलिये काशी आये। वहाँके कार्यकर्ताओंके सन्मुख आपने अपना विचार रख्खा। इसके लिये काशीमें जनमत तैयार करनेकी चेष्टा की, जिसमें आपको सफलता भी मिली।

(७) एकबार बरहजमें काँग्रेसके खिलाफ कुछ नागरीकोंने नगर–रक्षक–दलकी स्थापना की। नगर–रक्षक–दलके प्रभावसे गरीबोंको बचानेकेलिये कुछ गरीबोंने गरीबसंघकी स्थापना की। इस संघको बाबा राघवदासजीका वरदहस्त प्राप्त था। जब कोई सताया जाता था, वह तुरन्त गरीबसंघके सामने अपनी फरियाद रखता था और संघको दूध का दूध तथा पानीका पानी कर देनेमें देर नहीं लगती थी। गोला बाजार, भाटपार, सलेमपूरके बीच सैंकडो झगडे गरीबसंघद्वारा निपटाये गये। बरहजके नये नये झगडे आये दिन खडे होते रहते थे। इस संघने बरहजमें अनेक झगडोंका माकूल फैसला किया। लोगोंने इस संघको निर्णयका सन्मान किया और कुछ वर्षोंतक यह गरीब जनताकी प्रतिनिधि संस्था बनी रही। बाजारके अन्य मामलोंकोभी यह संघ देखता था। गरीबसंघमें बरहजकी गंदगीका मामला पेश हुआ। जिलाधीश–महोदयके पास संघके प्रतिनिधि गये। बाजारमें सफाईआंदोलन छिड़ गया। और सफाईकी उचित व्यवस्था उस समयके चेअरमन महोदयको करनीही पडी।

ये सारे काम होते थे राघवदासजीके नामपर। गरीब संघने कुछ वर्षोंतक उत्साहसे कार्य किया। संघ गरीबों और लाचारियोंको यथा योग्य सुविधा आर्थिक सहायताकी देता था। स्त्रियोंको उनके दुर्दिनमें जब कोई सहारा न होता था तो गरीबसंघ उनके आँसू पोछता था। जब कोई व्यक्ति आफतका मारा हुआ भटक जाया करता था, तो गरीबसंघ उसके कपडे–लत्ते–राह–खर्चकी व्यवस्था कर उसे सुरक्षित स्थानपर भेज दिया करता था। राघवदासजीको सामने देखकर हौसला रहा करता था और कठीनसे कठीन काम पूरा कर लेनेकी पर्याप्त शक्तिका अनुभव मनमें होता रहता था। दिन बदले, बदलीं रातें। गरीबोंका राजा, गरीबोंकी रक्षा सदाकेलिये करते करते बरहजसे एक दिन चला गया।

(८) सेवापुरीमें १९४९ में सुचेता कृपलानीने कहा था कि "बापू के" जानेके बाद हम नारियोंके एक मात्र नेता बाबा राघवदासजी रहे। महिलाओंकी दयनीय दशा आपसे देखी नहीं गई। आपने उनकी शिक्षाके लिये अनेक विद्यालय खोले। अनेक विधवाओंको जीविका दिलाई। राघवदासजीकी राय थी कि देशकी प्रगति महिलाओंकी प्रगतिविना अधूरी है। बहिनोंको आगे बढानेके लिये आप सतत प्रयत्नशील रहे। आपका विचार था कि विना सुशिक्षित् हुअे महिलाओंमें जागृति असंभव है। इस कारण शिक्षाके प्रचारके लिये आपने अथक प्रयास किया। देवरियाका कस्तूरबा–बालिका–विद्यालय, बरहजका सरोजिनी विद्यालय तथा लार और पडरोनाके बालिका–विद्यालयोंकी स्थापनामें भी आपका विशेष हाथ था। कुशीनगरमें यशोधराके नामपर बालिका–विद्यालयकी स्थापना करनेकी तीव्र इच्छा राघवदासजी कर रहे थे।

आपने देखा कि ग्रामीण क्षेत्रोंमें अर्थाभावके कारण ऐसी शिक्षणसंस्थाएं आगे नहीं बढ सकती। फिर भी, ऐसी बहनें जो आपके संपर्कमें आई और शिक्षित होनेकी भावनाकेसाथ आगे बढनेकी प्रतिभा रखती थी, उनको आपने सर्वथा आगे बढाया। आज अनेक बहिनें आपकी प्रेरणा तथा आशिर्वादसे काफी बढ गई हैं, और अपने कर्तव्योंका उचित रूपसे पालन कर रही हैं। अनेक हरिजन बहिनें आपके मार्गदर्शन तथा सहायसे शिक्षित होकर गांधीस्मारकनिधीके तरफ कतिपय केंद्रोंका संचालन कर रहीं हैं। इसके अतिरिक्त शीक्षा, स्वास्थ्य, विकास, महिलामंगल, योजनाओंके अंतर्गत अनेक बहिनें देशको सेवा प्रदान कर रहीं हैं।

स्वतंत्रताप्राप्तीके बाद ग्रामीण महिलाओंका राघवदासजीको विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। गांवगाँवमें चरखेका वितरण आपसे किया गया। उनके शिक्षणशिबिर चलाये गये। देहातकी महिलाओंने इस कार्यमें पूर्ण सहयोग आपको दिया। अपने तथा

परिवारके कपडेकी व्यवस्था की और अपनी जीविकाका उचित साधन प्राप्त किया। देवरियाका संरजामकार्यालय इस दिशामें उचित कार्य कर रहा है।

राघवदासजीने देखा कि जच्चाबच्चाकी उचित सेवा तथा देखभालका अभावही बालमृत्यू तथा बहिनोंकी अकालमृत्युका कारण था। इस दिशामें ग्रामिणोंके अंधविश्वास तथा अज्ञान औरभी सहाय्यक होते थे। राघवदासजीनें समाजमें प्रचलित विभिन्न प्रकारका कुरीतियों तथा उनके दूर करनेके तरीकोंकी तरफ सबसे पहले लोगोंका ध्यान आकर्षित किया। फिरभी महिलासेविका-बहनोंसे खुदकी सेवा लेना आपको पसन्द न था। महिलामंगलयोजना राघवदासजीकी विशेष देन है। राघवदासजीने विशेषकर विवाहकी दहेज प्रथाका घोर विरोध किया। स्त्री स्वसंरक्षणक्षम होअे, इसी इच्छासे उसको लाठी – काठी चलानेकी विद्या अवश्य प्राप्त होना चाहिये, ऐसी राय देते रहे राघवदासजी और साथ साथ उत्तेजना भी।

(९) गोधनके नाशसे भारतका जो शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक क्षय हुआ है, उसकी पूर्ती तबतक संभव नहीं, जब-तक गोंकशी बंद नहीं कर जाती। देवरियासे राघवदासजीने गोवध-बंदीके लिये वह घोषणा अथक की। परिश्रम किया। सरकारसे इसके लिये लिखा-पढी शुरू कर दी। अपनी सरकार कायम होनेपर ७०-७५ हजार तार और तीन लाखसे अधिक चिठ्ठियाँ आपने सरकारके पास भिजलावी। फलतः बहुतंत्री नगरपालिकाओंने गोवध-निषेधका निर्णय निजी रूपमें किया। गायोंकी रक्षाके लिये राघवदासजीने अनेक गोशालाएं, नेपाल, मिरझापूर, देवरिया, गोरखपूर आदिमें स्थापित की।

(१०) राघवदासजीने मिट्टीको सोना बनाया। १९३८ के भीषण बाढमें किसी तरह कमरभर पानीमें खडी सनझुरिया अपने दोनों लडकियोंको कन्धेपर लेकर गोदमें बकरीके दूधमुहे

मुनमुनको, जो दस या पाँच दिनका था, सम्हाले थीं। सनझुरिया, जातिकी सनझुरिया! देवारेमें था उसका घर, बिना खेत और पतिहीन। अपने बच्चेको छोडकर बकरीं जलमें बह गई थीं। किसको, किसको बचाअें सनझुरिया? खुद कई दिनोंकी भूखी थी। कौन सुने बाढमें उसकी पुकार? इस भीषण बाढ़में राघवदासजीने असहायोंकी सहायताके लिये काँग्रेस, गीताप्रेस, मारवाडी रिलिजियस सोसायटी इत्यादि संस्थाओंसे कर्तव्यपालन करवाया। सब लोक जूट गये। गाँव गाँव घूमकर सहायता पहुँचाई जा रही थी। द्रौपदीकी पुकारकी तरह सनझुरियाकी पुकार भगवानने सुनी। बाबा राघवदासजीने भेजी हुअी नाव आई। सनझुरिया मौतसे बचकर मुनमुन और दोनों लडकिओंके साथ नावपे बैठकर आश्रममें आई। आमके पुराने वृक्षोंका एक बगीचा था जिसकी छायामें बहुतसे बाढ़पीडित और आ रहे थे। उसीमें एक कोने अपने परिवारको लेकर सनझुरिया भी निर्जीवसी पडी थी। राघवदासजीकी निगाह, सबको हालचाल देते देते, सन-झुरियापर पडी। गोदमें बकरीके बच्चेको दूध पिलाते हुअे देखा। तो अपनी कहानी कहकर सनझुरिया रोने लगी। गाँवकी गरीब हरिजन निःसहाय लेकिन दयाकी इतनी ऊँची भावना, माता का यह स्वच्छ हृदय देखकर राघवदासजीकी आँखमें आँसू आ गया।

कुछ दिनोंके बाद बाढ़पीडित सभी अपने अपने गाँवको चले गअे। गाँवोंमें जिनका कुछ था ही नहीं वे कहाँ जायें? उनकेलिये आश्रमके पडोसमें बाढ़पीडित-भवन राघवदासजीनें बनवाया। उसीमें और लोगोंके साथ सनझुरिया भी रहने लगी। रोजा-रोटीका प्रबंध राघवदासजीनें किया था। कुछ दिनोंके बाद राघवदासजीनें सनझुरियाको कुशीनगरमें भेजा, जहाँ उसका एक इतिहासही बन गया। सनझुरिया वहाँ इंटोको ढोकर अपना गुजर करती थी। आगे चलकर पुत्रियाँ हरिजन-बालिकाश्रम दिल्लीमें गईं। सनझुरिया धर्मशालामें झाडू लगाती थी। दोनों लडकिओंके व्याह हो चुके, जब राघवदासजीने वरवधूओंको

आशीर्वाद दिया। सनझुरिया जैसे अनेकों, अनाथ विधवाओं, असहाय्य महिलाओंका उद्धारक राघवदासजी थे। १९५० के बाढोंमें भी इसी प्रकारकी सेवा राघवदासजी दे रहे थे।

(११) राघवदासजीने यात्रिओंकी सुविधाओंकी ओर भी ध्यान दिया। ट्रेनमें यात्रा करनेवाले यात्रिओंकी सुखसुविधाका ध्यान किसी को नहीं था। रेल्वे अधिकारी यात्रियोंसे घृणा करते थे। स्टेशनोंपर न तो पानी की व्यवस्था थी और न उनको कोई यह ज्ञान करनेवाला था कि कौन ट्रेन कब आती है और कब खुलती है। तृतीय श्रेणीमें यात्रा करनेवाले यात्रियोंको तो नारकीय यंत्रणा भोगनी पडती थी। उनके सुखदुःखको सुनने और समझनेवाला कोई नहीं था। यात्रियोंकी इन अव्यवस्थाओंकी ओर, सबसे पहले, ध्यान महाराष्ट्रमें धुलियाके जावडेकरजीका और उत्तर प्रदेशमें राघवदासजीका ही गया। आप पराधीन भारतमें भी यात्रियोंकी सुखसुविधाके लिये रेल्वे-कर्मचारिओंसे टक्कर लेते रहे। भारतके स्वतंत्र होनेपर राघवदासजी यात्री-परामर्शसमिती (रेल्वे ॲडव्हायसरी बोर्ड) के सदस्य हुअे। यात्रियोंकी सेवाका यह अचूक अवसर आपको प्राप्त हुआ। आपने रेल्वे बोर्डके समक्ष यात्रियोंकी अनेकानेक कठिनाईओंको उपस्थित किया और उनको किस प्रकार सुविधायें प्रदान की जाय इसका भी विवरण दिया। रेल्वेअधिकारिओंकी आँखे खुलीं। एक नयी लहर आयी। पूर्वोत्तर रेल्वेके जनरल मॅनेजरसे लेकर स्टेशनमास्तरोंतक में यात्रियोंके प्रतिस्नेह और सेवाकी भावना आयी। स्टेशनोंपर नये नये पाईप तोलगेही सर्वत्र पानी-पाण्डेकी नियुक्तियां हुअी। ट्रेनोंके पहुँचनेपर पानीपाण्डे प्रत्येक डिब्बोके-सामने पानी देते हुअे दिखाई दिये। यात्रियोंके लिये शौच और लघुशंकाकी व्यवस्था तो हुअी ही। पानीके पीने और स्नान करनेके लिये पानीका प्रबंध हुआ। इतनाही नहीं, स्टेशनोंपर मित्रता और सफाईका साम्राज्य हो गया। राघवदासजी हरएक स्टेशनोंपर इन व्यवस्थाओंको देखते थे। स्टेशनोंपर तथा ट्रेनोंके

डिब्बोपर आवश्यक सूचनाएं जो अंग्रेजीमें लिखी जाती थी, उनको हिंदीमें यात्रियोंकी सुविधाके लिये लिखवानेका आग्रह पहले पहल राघवदासजीका था। ट्रेनोंके तीसरे दर्जेमें भी पंखा और विद्युत् लगवानेका सुझाव राघवदासजी ही का था। गरीब किसान लोगोंकी सुविधाके लिये राघवदासजीने रेल्वेबोर्डके सामने प्रस्ताव दिया कि स्टेशनोंपर सतू, भूजा, मुंगफली, चना, चिउरा और भेली के बेंचनेके लिये भी स्वीकृति प्रदान की जाय। यात्रियोंकी सुखसुविधाका यह आंदोलन यहाँतक बढा कि "रेल-रोड-यात्री-संघ" की स्थापना गोरखपूरमें हुअी। "यात्रीबन्धु" के पास जाकर यात्री अपनी असुविधाओंको कहने लगे। यात्रिओंकी सारी असुविधायें १९४७ से १९५१ तक दूर हो गई। साथ ही साथ बिनाटिकट चलनेवालोंकेसाथ भी अभियान प्रारंभ कर दिया। स्वयं टी. टी. की भाँती बिगर टिकटवालों पकडनेके लिये राघव-दासजी दौड पडते थे। बिगरटिकटवाले विद्यार्थिओंसे आपको बहुत बडी चीड थी।

इसी तरह आपने रोडवेजके बसोंपर चलनेवाले यात्रियोंके लिये भी सुविधाकी व्यवस्था करा ली। रोडवेज स्टेशनोंपर पानी, शौच, लघुशंका, सफाई आदिकी सुंदर व्यवस्था कराई। आपकेही प्रयत्नसे रोडवेजमें महिलाओंके लिये कुछ सीटें सुरक्षित रखी जाती थी। रोडवेजकी आजकल चलनेवाली व्यवस्था १९३२-३३ मेंही राघवदासजीके मस्तिष्कमें आई थी। आपने बरहजसे देवरियातक चलनेवाली खाजगत बसोंकी एक समिती बनवाई जिसके टिकट-स्टेशन बरहज तथा देवरियामें खोले गये थे। दोनों ओरसे नियमित समयसे बसे चलती थी। कुछ दिनोंतक देव-रियासे कुशीनगरतक भी यही व्यवस्था चली।

राघवदासजीने बौध यात्रियोंके आरामके लिये १९२४-२५ ई. से अथक प्रयास किया। उस सालमे कुशीनगरके जीर्णोद्धारका वीणा आपने उठाया। बिडलासे कहकर एक बृह-द्धर्मशाला आपने बनवाई। क्यों कि वहाँ ब्रह्मा, श्याम, इंडोचीन,

जापान, चीन, तिब्बत और सीलोन के कई सौ यात्री प्रतिवर्ष भगवान बुद्धके दर्शनार्थ आया करते थे। धर्मशालाके बीच एक विशाल सभागृह बना जिसमें भगवान तथागतकी संगमरमरकी मूर्ति रखी गई। भगवान बुद्धके सारे उपदेश दीवारोंपर अंकित किये गये। बौद्ध यात्रियोंके लिये देवरिया और कुशीनगरके बीच (वसंतपुर धुसी) एक छोटीसी धर्मशाला सडकके किनारे राघवदासजीने बनवाई।

बौध यात्रियोंकी शिक्षाके लिये हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी आदिकी व्यवस्था कुशीनगर तथा बरहज आश्रममें राघवदासजीने कराई। कुशीनगरतक सारनाथसे आनेवाले भिक्षु-यात्रियोंकी सुविधाके लिये राघवदासजीने सतत प्रयत्न किया। लुम्बिनीमें भी भिक्षु-यात्रियोंके लिये सुविधा प्रदान करनेकी आपने व्यवस्था की।

(१२) विधानसभाका इस्ताफा देनेके बाद राघवदासजीने लोगोंको श्रमदानके लिये उत्तेजना दी। श्रमदानसे बान्धबंदिस्ती और रास्तेकी तरतूद उनके लिये हुअी जिनके पास साधना अवजारोंका अभाव था।

(१३) बिहारमें मैरवाका और उत्तरप्रदेशमें गोरखपूरका कुष्ट सेवा-आश्रम राघवदासजीका ऐसा निर्माण है जिसकी बराबरी भारतमें तो कहांभी नहीं। भगवान बुद्धकी भूमीमें गुरु गोरखनाथके देवालयसे उत्तरकी ओर चले, तो कोई एक मीलपर एक खुलेसे घेरेमें कुछ स्वच्छसे मकान लोगोंका ध्यान खीचेंगे। विवेकानंदका वचन राघवदासजी किशोरावस्थेमें सुन रहे थे कि "मनुष्यकी आत्माही परमात्मा है। इसकी आराधना करनी चाहिये। उस ईश्वरकी सेवा करो जो बीमार, कुष्टरोगी और पापीके रूपमें तुम्हारे पास आता है।" गोरखपूर-देवरिया आदि जिलोंमें हर दो सौ व्यक्तिओंमेंसे कोई तीन व्यक्ति कुष्टरोगसे आक्रान्त हैं। किसीभी सभ्य तथा उन्नतिशील राष्ट्रके लिये ये

संख्याएं चौका देनेवाली है। इससे राघवदासजी तथा आपके साथिओंको सेवा-कार्य करनेकी प्रेरणा मिली। तारीख १ ऑगष्ट १९५१ से आश्रमने रोगियोंकी चिकित्साकी सुविधाकेलिये अनेक केंद्र स्थापित किये हैं। देवरियामें १९५३ जनवरीमें, बस्तीमें १९५३ की गान्धिजयन्तिको, मैरबा (बिहार) में १९५४ में, चौरीचुरामें १९५५ के अंतमें और चेतनवामें १९५६ के अंतमें कुष्टसेवा केंद्र स्थापित हुअे। गाँवोंमें घूमघूमकर आश्रमके कार्य-कर्ता रोगियोंको दवा देते हैं। कुष्टकी आधुनिकतम चिकित्साओं और नये सिद्धान्तों तथा खोजोंसे सदा परिचित आश्रम रोगियोंकी देखभालमें निरंतर व्यस्त रहता है। प्रतिसप्ताह १७०० रोगि-योंको दवाका वितरण आश्रम कर रहा है। सफलिन नामक दवाकी उपयोगिता ज्ञात चिकित्साओंमें सबसे शक्तिशाली है। आकान्त स्थानपर त्वचाके नीचे तथा माँसपेशीमेंभी तुवरक तेल सुईद्वारा डाला जाता है।

कुष्टरोगियोंके पुनर्वासका प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह सुझाव दिया जाता है कि एक परिवारकी यदि एक एकड़ भूमी तथा कृषिके कुछ आवश्यक उपकरण दे दिये जाय, तो वह स्वतंत्र रूपसे अपना कार्य कर सकता है। बात अलग! रोगीकी अवस्था, शारीरिक क्षमता, तथा बौद्धिक विकासके अनुसार रोगीको कोई उपयुक्त कार्य सौंपा दिया जाता है। कताई, बुनाई, खेती, बागवानी आदि अनेक प्रकारके कार्योंमें रोगी अपनेको दिनभर व्यस्त रखते हैं। इतनाही नहीं, स्वावलंबी बनकर अपना अगला जीवन गुजार सकेंगे।

लगनशील कार्यकर्ताओंकी त्यागमयी सेवाने रोगिओंमें सचमुच नयी आशाका संचार कर दिया है। इस काममें राघव-दासजीका हृदय इतना तन्मय हो जाता था कि सारी करुणा वहाँ केन्द्रीभूत हो जाती थी। आपकी केवल यही सेवा आपकी महानताको दिग्दर्शित करनेके लिये काफी होगी।

इसी सेवाके लिये श्रीगान्धी–स्मारक–निधिने सहायता देना स्वीकार किया और श्रीविजयनाथजी त्रिपाठीसरीखे तथा ऐसेही कुछ और उत्साही कार्यकर्ता प्राप्त हो गये। बरहज आश्रमका यह ध्येय है कि कुछ वर्षोंमें यहाँके आसपासके स्थानोंसे यह कुष्टरोग सर्वथा निर्मूल कर दिया जाय।

(१४) अप्रैल १९५५ में विनोबाजी भावेकी साद सुनकर राघवदासजी भूदानयज्ञकी सेवा करनेके लिये चले गये। शुरूमें दो संवत्सर युक्तप्रदेशकी पदयात्रा आपने की और १९५७ में मध्यप्रदेशमें प्रवेश किया। इसी आन्दोलनमें ग्रामदान और संपत्तिदान राघवदासजीने सम्मीलित किये। मध्यप्रदेशमें आप दिल तोडकर काम कर रहे थे। मध्यप्रदेशके आदिवासियोंके बीच जो जंगलों–पहाडियोंमें रहते हैं, आपने पांच, छे दिनोंतक अन्न इसलिये धारण नहीं किया कि वे भोजन नहीं पाते हैं। भूखोंके बीच कैसे भोजन करूँ, ऐसा आप कहते रहे। इसका प्रतिफल यह हुआ कि वहाँकी सरकारने अुनको अन्न देनेकी व्यवस्था की।

राघवदासजीने समाजमें जिसेही उपेक्षित देखा, उसके साथ आप हो गये।

(१५) केदारेश्वरसे कन्याकुमारीतक भारत एक अखंड देश है। तो उसकी एक राष्ट्रभाषा तो चाहिये। इसकेवास्ते हिंदी राष्ट्रभाषा–विद्यालयकी नीव महात्मा गांधीसे डलवाई राघव–दासजीने १९३० में जभी संपूर्ण स्वातंत्र्यका ध्येय काँग्रेसके मार्फत भारत जाहीर कर रहा। वह हिंदी राष्ट्रभाषा–विद्यालय थोडेही दिनोंमें अखिल भारतीय बन गया, क्योंकि निःशुल्क शिक्षा तथा भोजन आदिकी व्यवस्था हो जानेसे दूर दूरके विद्यार्थी यहाँ आते थे। मद्रास, महाराष्ट्र, उडीसा, बंगाल, और आसाम आदि प्रान्तोंसे छात्र यहाँ आकर हिंदी शिक्षाके साथ साथ राष्ट्रीय भावनाओंसे ओतप्रोत होकर अपने अपने प्रांतप्रदेशमें जा रहे और हिंदी प्रचारका कार्य करने लगे। इसके अतिरिक्त लंका, ब्रह्मा,

मलाया, बँकाँक और चीन आदि देशोंके छात्र भी यहाँ आये और शिक्षा प्राप्त किये। उस समय बरहज आश्रम एक आंतरराष्ट्रीय स्थान बन गया था। भारतमें जितनीही हिंदीकी परीक्षाअें लेनेवाली प्रमुख संस्थाअें थी, लगभग उतनोंका केन्द्र था बरहज आश्रम। इस कार्यका प्रभाव यह हुआ कि राघवदासजीका संबंध भारतकी अनेक हिंदी शिक्षणसंस्थाओंसे हुआ। हिंदी साहित्य–संमेलन प्रयागसे आपका बडाही घनिष्ट संबंध आ गया और चिटणीसके नाते बहोत बरसोंतक चल रहा। इस संस्थाके उत्थापनमें राघवदासजीका भी प्रमुख हात रहा है।

गीताप्रेसकी स्थापना और उत्थापनमें राघवदासजीने विशेष हात बटाया। "कल्याण" के प्रथम अंकके संपादक बाबा राघवदासजी थे। गीतारामायण–परीक्षा जो हिंदी माध्यमसे होती थी, उसका संचालन बरहज आश्रमसे होता था। राघवदासजी उसके संस्थापक और आपके प्रिय शिष्य सत्यव्रतजी उसके संयोजक थे। १९४२ से इसका संचालन गीताप्रेससेही होता है, कारण उसी सालमें राघवदासजीकी यह संस्था जब्त ठहरी गई।

अपने वक्तव्योंके प्रारंभ और अन्तमें राघवदासजी हिंदीके भजन निश्चित रूपसे गाया करते थे। आपके लेख हमेशा हिंदीमें प्रकाशित होते रहते थे। वाराणसीके "आज" और साप्ताहिक "संसार" आपकी साहित्यिक भावपूर्ण हिंदी भाषाका प्रमाण दे रहे हैं। यद्यपि आप अच्छी अंग्रेजी भी जानते थे, मराठी आपकी मातृभाषा थी, टंकसाली संस्कृतका भी आपको ज्ञान था, काम चलाऊ बंगलामें भी आपकी जानकारी थी, तो भी आप हिंदीहीके "बाबा राघवदास" थे।

जब केंद्रीय सरकारने हिंदी भाषाको राज्यभाषाके पदपर लानेका सराहनीय कार्य किया, तो दक्षिणमें जहाँसे हिंदीका विरोध हो रहा और है, एक शिष्टमंडळ नवंबर १९५० में भेजा गया जिसके सौजन्यमूर्ति बाल गंगाधर खेर, आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय

और बाबा राघवदासजी प्रमुख सदस्य थे। मद्रासमें जब शिष्ट-मण्डलको विरोधियोंने काले झण्डे दिखाये, तब बाबा राघवदास-जीका महाराष्ट्रीय खून गरम हो गया और आपने एक खास व्यक्तिके बारेमें, जो इस कार्यका संचालक था, केन्द्रीय सरकारको एक विरोधात्मक पत्र लिख दिया और खुली सभामें उसके खिलाफ भाषण दिये। उस व्यक्तिने केवल राघवदासजीपर मानहानिका दावा किया और न्यायालयसे आपके ऊपर तीन हजार रुपयोंका हुकूमनामा हुआ। इस संबंधमें तीन वार आश्रमपर पर कुर्की आ चुकी। अभिप्राय यह है कि राघवदासजी हिंदीके अपमान करनेवालोंको फूटी आँख भी नहीं दीखना चाहते थे।

राघवदासजीका हिंदी प्रेम पराकाष्टापर पहुँच गया था। श्रीमती सरोजिनीदेवी नायडू, शंकरराव देव और राजगोपाला-चारिअर जैसे लोगोंके हिंदी-विरोधका आपने स्पष्ट शब्दोंमें विरोध किया। "भारत जैसे महान देशकी अपनी राष्ट्रभाषा न हो, यह अत्यन्त कष्ट और खेदकी बात है।" ये थे राघवदास-जीके शब्द। जब केंद्रीय सरकारने पंधरह वर्षतक हिंदीको लटकाये रखनेकी नीतिका प्रश्रय लिया, तब राघवदासजीने इसका भी विरोध किया। आपका कहना था कि "हिंदी एक ऐसी भाषा है जिसके बोलने और समझनेवाले भारतमें सबसे अधिक हैं। इसका साहित्य, कोश, लिपी और समस्त अंग ऐसे पुष्ट है कि इसकेलिये टालम-टोलका प्रश्नही गलत है।" जब काटजू और शंकरराव देव जैसे लोगोंने संस्कृतकी चर्चा चलाई, तो राघवदास-जीने बडी दृढतासे कहा कि "वह साधारण जनताकी भाषा नहीं, यदि संस्कृतके प्रति हमारी महान श्रद्धा और भक्ति हो।" इसलिये आपने ऊर्दूआन्दोलनका भी विरोध किया। १९५२ का ८ डिसेंबर उत्तर प्रदेशमें "हिंदीका दिन" माना गया बहुत समारोहसे। राघवदासजीने दिलसाफ इशारा किया कि "आज हिंदीके प्रसारमें उत्तर प्रदेश ताकद न लगाये तो राघवदास हिंदीकेलिये प्राण-दान करेगा।"

गोरखपूरमें ग्रामीण विश्वविद्यालयमें सारी शिक्षाओंका माध्यम हिंदी है। हिंदीकी भोजपुरी चमकसे राघवदासजी प्यार करते थे। ग्रामीण लोगोंसे तो आप भोजपुरी बोला करते थे। सन १९५५ में आश्रमपर राष्ट्रभाषा-विद्यालयका जलसा मनाया गया। डॉ. रामविचार पाण्डेय बलियासे आये थे। भोजपुरी कविताअें चल रही थी। राघवदासजी भी आनंद ले रहे थे। कभी कभी आप कहते थे कि "मैं उत्तर प्रदेशकी हिंदी भोजपुरीमें सब बोलता हूँ परंतु उत्तर प्रदेशके लोग मराठी-गुजराथी नहीं सीखते।" आपका था विचार कि हरएक प्रदेशके लोग दूसरे प्रदेशवालोंकी भाषाअें सीखें। इससे अपनापन बढेगा। एक दूसरेके निकट पहुँचनेका मार्ग प्रशस्त होगा।

(१६) राघवदासजी परम भागवत थे। १९३४ में भूकम्पसे पूरा बिहार जीर्णशीर्ण हो चुका था। अन्य प्रांत भी सर्वाधिक प्रभावित हो चुके थे। राघवदासजीने वीर प्रहरीकी भाँति अपना सारा बल भूकम्प-पीडितोंकी सेवामें लगाया। २८००० रुपये और अन्नकी सहायता अपने सुयोग्य शिष्य श्री सत्यव्रतके नेतृत्वमें राघवदासजीने भेजी। परन्तु आपकी आत्माको इससे शान्ति न मिली। आपने भूकम्पके बाद बाढ पीडितोंकी सेवा की।

(१७) राघवदासजी बुराईके प्रति असहनशील थे। "कोल्हु" करके बारेमें आपने स्वराज्य-सरकारकी भी परवाह न की। २१ जनवरी १९५२ को विनोबाजीके आगले पडावका प्रबंध देखने नगरियासे कासगंज राघवदासजी जा रहे थे। श्री राहेनलालने अपनी नयी कार दी थी। रातका समय, ड्रायव्हरने सिगरेट जलाना चाहा। राघवदासजीने इशारेसे मना किया। वह न समझकर सुलझाने लगा। झट् कार रुकवाई। जाडोको रातमें राघवदासजी ११ मील पैदल चलनेको उतर पडे।

(१८) राघवदासजी फरारकी अवस्थामें थे। (१९४२ से १९४४ तक) जिस समय बंगालमें अकाल पडा था, उस समय

बाबाजी सुनतेही सहायता करनेकेलिये महाराष्ट्रसे बंगाल गये। सेवा करते करतेही कुछ दिनोंपरान्त आपको चेचक हो गया।

१९४८ में अकालकी छाया का आभास पाते ही जनता भूखों न मरे, इसलिये "तरकारी बोओ" आंदोलन बाबाजीने प्रारंभ कर दिया। भारतके स्वतंत्र हो जानेके बादही देशमें अन्नवस्त्रके लाले पडे। सूंअर और घोडोंको खिलाई जानेवाली विदेशोंकी मकई भी भारतके गरीबोंकेलिये अलभ्य हो गई। अतः राघवदासजी एक साल 'शाकाहारी' रहे। इसी समय देवरियामें १९४९ सेही भयंकर अकाल पडे। लोग भूखों मरने और तडपने लगे। देवरियाकी समाजवादी पक्षने सत्याग्रह किया। अकाल और दुर्भिक्षकी सही बातें भी दबाई जाने लगीं। बरहजके निकट सोनाडी नामक गाँवमें सुखारी और पँवारू नामक दो व्यक्ति भूखसे मर गये थे। गाँव–वालोंने बाबाजीको सूचना दी। फलतः राघवदासजीने लिखनेपर अधिकारिओंने जाँचसे कहा कि सुखारी–पँवारू पेचिससे मरे हैं। इसपर राघवदासजी क्रोध उठे। सोनाडी गाँवमें गये। सारा गाँव इकठ्ठा हो गया। राघवदासजी सुखारी और पँवारूकी झोंपडीमें पहुँचे। उनकी झोंपडीमें एक मुठ्ठीभी अन्न नहीं मिला। झोंपडीभी टूट गई थी। धूप जमीनपर पड रही थी। दो तीन बच्चे गन्दे चिथडोंमें लिपटे थे। भयंकर चेचकसे बडे बडे दाने पीबके साथ उनके शरीरमें थे। उनके पास जंगीसी एक स्त्री बैठी थी। यह दशा देखकर राघवदासजी रोने लगे। आपने अपने शरीरसे चादर उतारकर बच्चों तथा उस स्त्रीके ऊपर डाल दी। आपको रोते देखकर सारा गाँव रो पडा। राघवदासजी उसी दम लखनऊ गये। समूचे देवरिया जिलेमें सुखारी और पँवारू–दिवस मनाया गया। इतना होनेपर प्रांतीय सरकारका आसन डिगा और पूर्वी जिलोंकी ओर सरकारने ध्यान दिया।

(१९) गांधीजीकी भाँति राघवदासजीने प्राकृतिक चिकित्साको अधिकसे अधिक सरल, सस्ती और सर्वसुलभ बनानेकी दृष्टि रखी। इसी विचारसे बरहज आश्रममें एक प्राकृतिक स्वयं–

चिकित्सालय नामकी संस्था स्थापित की। कई बार आपने अपनी इच्छा भी प्रगट की कि बरहजका यह प्राकृतिक चिकित्सालय प्राकृतिक चिकित्साका एक सुव्यवस्थित शिक्षणकेंद्र बने। आपने प्राकृतिक चिकित्साकी मानमर्यादारक्षार्थ एवं इस पद्धतीके अधिकाधिक विकासार्थ जो जो प्रयोग किये हैं, वे इतिहासमें अविस्मरणीय हैं। सन १९५० में गांधीस्मारकनिधिद्वारा प्राकृतिक चिकित्सालयोंकी सहायता बंद हो गई थी। उसी अवसरपर बातोंके सिलसिलेमें राघवदासजीने बडे जोरदार शब्दोंमें कहा था कि "याद रखिये। चाहे कोई भी शक्ति प्राकृतिक चिकित्सापर अविश्वास करे, किन्तु राघवदास हर अवस्थामें प्राकृतिक चिकित्साहीका अनुयायी रहेगा।"

आपने उसी सालमें प्रत्यय दिया। सन १९५० सालमें राघवदासजी जलोदरसे पीडित थे। जोही देखता, कहता था कि बाबा अच्छे नहीं होंगे। किन्तु डॉ. भागवत अप्पाकी प्राकृतिक चिकित्सामें (१) रामनाम महौषधि अधिक प्रयुक्त हुअी है। (२) गीतारामायणका श्रवण जलपान और भोजनसे भी अधिक प्रिय आपको रहा है। (३) एक समय एकही वस्तु खानेका अथवा कुछ दिनों एकही तरहके आहारपर रहनेको रोग निकालनकी दृष्टीमें महत्त्वपूर्ण, लाभकर या स्वास्थ्यकर माना जाता है। राघवदासजीने वर्षों मूगफली खाकर, शीशमकी पत्ती चबाकर स्वस्थ जीवन बिताया है। (४) स्थानीय वनस्पतियोंका उपयोग रोगोंकी चिकित्सा करनेमें प्रयुक्त हो सकता है। राघवदासजीने बरगद-पत्ती दर्द और सूजनके स्थानमें अनेकोंको बांधनेको बताया जो कि लाभकर सिद्ध हुआ। (५) सूर्यकिरणोंके अंतर्गत पाए जानेवाले सात विभिन्न रंगोंका अलग अलग चिकित्सामें प्रयोग किया जाता है। राघवदासजी स्वयं चष्मा लगाते थे। मगर पीछे आपका चष्मा उतारा गया था। निकलते समयके सूर्यके सामने आँखपर हरे रंगका कपडा ढक कर आँख बंद करके प्रकाश लिया जाय तो लाभ होता है। (६) मालिसका भी एक विशिष्ठ

स्थान है। राघवदासजी मालिसके विशेषज्ञ थे। प्रचंड गांधीवादी होनेके कारण और श्रीसमर्थ रामदासजीके भक्त होनेके कारण 'प्रथम खुद अनुभव करना और तदनंतर दूसरोंको उपदेश देना", राघवदासजीका प्रघात था। १९४२ में आप चेचकसे पूनामें बीमार थे। मसाज-तज्ज्ञ कृष्णरायजी आगाशे आपका मसाज करनेको प्रतिदिन आते थे। मसाजकी उपयोगिताकी चर्चा चलती थी। एक दिन निश्चय हो गया कि बीमारको मसाजसे स्वास्थ्य सुविधासे मिलता है। उसी दिन अपनी भाबीको मसाज-शिक्षा मिलनेकी व्यवस्था राघवदासजीने की। बच्चों और स्त्रियोंको उससे फायदा जरूर हुआ। (७) इसी प्रकार ठंडी पट्टी पेटपर रखनेसे कब्ब दूर होता है। सिरपर गिले कपडेकी ठंडी पट्टी बालोंको कालाका है। मुँहमें ठंडे पानीका कुल्ला रखकर, आँखोको हथेलीमें पानी रखकर, धोनेसे नेत्ररोग दूर होते हैं। (८) यौगिक आसनों, प्राणायाम, आदि सबका प्रयोग राघव-दासजीने जनसाधारणमें प्रसारित किया और आप तो उसके आजीवन अनुयायी रहे थे।

(२०) राघवदासजी बचपनसेही भाऊक रहे हैं। लगभग १९११ कि कथा होगी। दो आप्तजनोंके साथ अपनी मौसीसे मिलनेके लिये राघवदासजी नहीं, राघवेंद्र जा रहा था। मौसी कन्हाडसे नौ ९ कोस दूरीपर देहातमें रहती थी। रास्तेमें एक नाला था। थोडे विश्रामके लिये एक पेडके नीचे सब बैठे। राघवेन्द्र दो छोटे पत्थर हाथमें लेकर भगवानका नामस्मरण करने लगा। घण्टा बीता, राघवेन्द्रका भक्तियुक्त अश्रुपात चल रहा था। साथी बैचेन हो गये। क्योंकि उन्हें भजनमें रस न था। थोडी देरीसे वातावरण शान्त हुआ और सब लोग प्रस्थान किये।

योगिराज अनन्तप्रभुसे मिलनेके बाद इसी भाऊकताका कायापालट हो चुका। वशिष्ट, विश्वामित्र, सांदीपनीका मार्गा-नुशीलन होने लगा। वेदों, पुराणों, स्मृतियों, उपनिषदोंका

अध्ययन–अध्यापन अवकाशके क्षणका विशेष कार्य बन गया। गीतारामायणका पठन–पाठन और चिंतन प्रारंभ हुआ। रामनामका अखंड जप चलने लगा।

जब हमारे देशमें बडे बडे यज्ञोंकी कथा केवल पण्डितोंके पुस्तकोंमेंही रह गई थी, उस समय राघवदासजीने परशुरामक्षेत्र सोहनागके स्थलमें रुद्रयज्ञका अपूर्व अनुष्ठान किया बिहारके भूकम्पके बाद आपने बरहजमें श्रीविष्णुमहायज्ञ किया जिससे आगामी विपत्तियोंसे छुटकारा मिल सके। राघवदासजी उन लोगोंमें थे जो जो शास्त्रकी दुहाई देकर निष्क्रिय रहना पाप समझते थे। आप मानवमात्रका आध्यात्मिक विकास चाहते थे। १९३५ से १९५० तक राघवदासजीने यज्ञोंके अवसरपर काशी आदि क्षेत्रोंसे बडे बडे विद्वान वैदिक बुलाकर संकीर्तनोंकी अखंड माला गुम्फ ली। १९४० में एकलक्ष प्रतिनिधिओंका अखिल भारतीय रूप–कला–संकीर्तन–संमेलन राघवदासजीने समारोहसे यशस्वी किया और १९५० में अभय–राघव–मंदिरकी स्थापना की। गीताप्रचार–समितीसे और रामायण–प्रचार–समितीसे घरघर गीतारामायणोंका संदेश राघवदासजी ले रहे थे। भारत और ब्रह्मदेशमें छः सौ गीतारामायण परीक्षा–केंद्र हैं, जहाँ हरसाल तेरह हजार युवयुवती गीतारामायणकी परोक्षा देती है।

(२१) राघवदासजी अनावश्यक उपेक्षा सहन नहीं करते थे। अयोध्याके राममंदिरके मामलेमें आप पडे जब उसे मस्जीदका रूप देनेकेलिये मुसलमान लोग आतुर थे। इस कार्यसे उनकी बडी आलोचना हुअी और मश्रुवालाने तो अपनी कलमही तोड दी थी। परन्तु राघवदासजीको जरा भी चिन्ता नहीं थी।

राघवदासजी एक वैष्णव ब्रह्मचारी संत थे। लेकिन सभी धर्मों, सांप्रदायोंमें आपका समानरूपसे विश्वास था। १९३५ में आपका ध्यान भारतके बौद्ध तीर्थोंकी ओर गया। प्रेम और श्रद्धासे आंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें कैसे सद्भावना आवे, यह राघवदासजीकी

कल्पना, चिन्ता थी। सन १९५१ में राघवदासजी महात्मा ईसाके विचारोंसे प्रभावित हुअे। रो पडे और बोले:– " महाप्रभुजी किसी भी रूपसे स्वामी रामकृष्ण परमहंससे कम नहीं थे। पर आपको स्वामी विवेकानंद जैसा शिष्य मिला, जिसने आपकी कीरत विश्वव्यापी की। और ? महाप्रभुजीको मैं अभागा शिष्य मिला जिसने कुछ नहीं किया। "

तो भी राघवदासजीका समाधान यह था। " नगाधिराज हिमालयकी पुत्री माता सरयू, गंगा तथा नारायणीके जलसे प्रक्षालित प्रदेशमें, जहाँ ऋग्वेदकी माध्यंदिनी शाखाके द्रष्टा ऋषि गर्ग काश्यपके अमर वाणीका संदेश फैला, महात्मा गौतमबुद्धने मानवताको शान्ति–अहिंसा का सन्देश दिया, कबीर तुलसीकी अमर वाणी घरघरमें गुञ्ज रही, मर्यादा–पुरुषोत्तम रामचंद्र, माता सीता, आदर्श–बन्धु लक्ष्मण–भरतकी कहानी सदाके लिये सो गया, वहाँ मुझे भी दुर्लभ मानवी जीवनकी भारतीय संस्कृतिसे सेवा करनेका मौका मिला। "

(२२) स्वराज्यका उदय भारतमें १९४७ के १५ अगस्त रोज हुआ। लोकशाहीकी घटना भी बनाकर भारतने अपनी सर्वतंत्र स्वतंत्र आझादी १९५० के जनवरी २६ रोज प्रस्थापित की। पर उसका एकमेव सामर्थ्य जो राष्ट्रीयतासे सामूहिक दिलासा है उसका अभाव जहाँ वहाँ प्रतीत हो रहा। व्यक्ति–व्यक्तिमें, समूह–समूहमें, प्रदेश–प्रदेशमें जो सरकार अखिल भारतकी निष्ठापर निर्धारित होना चाहिये, उसका दर्शन दुर्मिळ देखकर राघवदासजी सचिंत हुअे और सोच–जाँच कर आपने देखा कि सन्त विनोबाजी भावेके भूदानयज्ञमें उस सहकारके निर्माणकी जादुगरी है। देखतेही राघवदासजीने उसी आंदोलनमें अपना हिस्सा लेनेकी तुरन्तही तैय्यारी की। अपना सेवाव्रत, अपनी कृतिवीरता और अपनी संघटनशक्ति इकठ्ठी करके राघव–दासजी भूदानयज्ञमें शामिल हुअे और आपकी तपश्चर्या उसी क्षेत्रमें अपना तेज दे रही।

विनोबाजी मानते है कि बाबा राघवदास भूदानयज्ञके हनुमान थे। विनोबाजी कहते है कि "जिस तरह हनुमानजीके बलकी थाह नहीं लगती थी और अुन्हे स्वयंही अपने बलका ज्ञान नहीं रहता था, उसी तरह बाबा राघवदासजीको निरासक्त भावसे सेवाकार्यमें प्रतिक्षण जुटे देखकर बडी प्रेरणा मिलती है।"

भूदानयज्ञका उदय हुआ १८ अप्रैल रोज, जो महर्षि धोंडो केशव कर्वेजीकी जयन्ति है। १९५१ साल था। निजाम हैदराबाद संस्थानका एक विभाग तैलंगणके पोंचनपल्ली नामक हरिजनोंका गाँव है भूदानयज्ञका जन्मस्थान। बाबा राघवदासजी अप्रैल १९५१ से भूदानके लिये निकल पडे थे। कुछ दिनोंतक विनोबाजीके साथ उत्तरप्रदेशकी और बादमें स्वतंत्ररूपसे पैदल यात्राप्रारंभ किया आपने। ९ अप्रैल १९५५ से आपने दस हजार मीलसे अधिक पदयात्रा की। आपकी कुल पैदल यात्रा पंधरह हजार मीलसे कम न होगी। आपने जो अलगसे भूदान प्राप्त किया है वह पचास हजार एकडसे कम नहीं है। आपने पसतीस हजार नकद संपत्ति-दान प्राप्त किया। लगभग सौ ग्राम दानमें आपसे प्रदान किये हैं जिनमें ६५ गाँव तो केवल वनवासी सुमित्रा राजमोहिनीदेवीके क्षेत्र सरगुजा मध्यप्रदेशमें प्राप्त हुअे हैं। आपके अंतीम पत्रसे ज्ञात होता है कि २४ गाँव आपको मिर्झापूरके रामगोविंदपूर आश्रमके आसपास मिले है। १९५५ में आपका व्रत दो वर्षोंका था। किन्तु १९५७ में आपने संकल्प किया कि भूदानकी समस्या विना हल हुअे, "मैं अपने बरहज आश्रमपर वापिस नहीं जाऊंगा।"

१९५८ ईसवीके १५ जनवरी रोज राघवदासजीने नश्वर कलेवरको छोडकर निर्वाण किया। खबर सुनतेही सन्त विनोबाजी सगद्गद बोले "कामना हमारी, सफलता बाबा राघवदासजीकी।" क्योंकि, दधीचिकी तरह आपने अपनेको गला दिया। उत्तरप्रदेशका क्षेत्रफल १,१३,४९४ वर्गमील है, जो संपूर्ण भारतके क्षेत्रफलका लगभग ग्यारहवा अंश है। इसमें ५१ जिले,

२२१ तहसील, १,११,७७२ गाँव, ४८६ नगर या कसबे हैं। इन नगरोंमें ३० बडे शहर हैं। इनमें भी १६ शहर ऐसे हैं, जिनकी जनसंख्या एक लाख या इससे अधिक है। उत्तरप्रदेशकी जनसंख्या ६ करोड, ३२ लाख, अर्थात् भारतकी जनसंख्याका षष्ठांश है। आबादीका घनत्व ५५७ व्यक्ति प्रति वर्गमील है, जब कि भारतकी आबादीकी औसत ३०३ व्यक्ति प्रतिवर्गमील है। इस प्रदेशकी ७४ प्रतिशत जनताका मुख्य उद्यम या जीविका-उपार्जनका साधन कृषिही है। अन्य उद्योगोंमें ८ प्रतिशत जनता लगी है। आबादीके अनुसार प्रत्येक व्यक्तिको १·१५ एकड़ भूमि मिल सकती है। भूक्रांति-आरोहण प्रारंभ तो थोडी थोडी जमीन माँग कर हुआ, फिर षष्ठांश माँगा गया और फिर ग्रामदान तथा स्वामीत्वविसर्जनकी बात आयी। भूदान, ग्रामदान, संपत्तिदान, श्रमदान इत्यादि विचार और कार्यक्रम प्रांतमें फैले।

सर्वोदयक्रांतिकी सफलतामें उत्तरप्रदेशने अपना हविर्भाग अर्पण किया। जितना विशाल प्रदेश है, जितनी यहाँ बुद्धि और क्षमता है, उसके अनुपातसे काम नहीं हुआ, किन्तु जितने लोग इस काममें लगे और जितना कुल सहयोग प्रतिष्ठित नेताओंका मिला उसके माने जो कुल अभीतक हुआ, वह काफी उत्साहवर्धक है। भूदान एक क्रांतिकारी जन-आंदोलन है। उत्तर प्रदेशकी अपनी यात्राको विनोबाजीने "निष्ठा-निर्माण-यात्रा" कहा है। १ व २ नोव्हेंबर १९५१ को प्रदेशके रचनात्मक कार्यकर्ताओंका संमेलन विनोबाके सान्निध्यमें मथुरामें हुआ। वहाँ पाँच लाख एकड़ जमीन एकत्र करनेका संकल्प प्रांतकी ओरसे किया गया। बाबा राघवदासजी इस समय विधानसभाके सदस्य थे। आप उसे त्याग कर प्रदेशके संकल्पकी पूर्तिमें जूट गये। उत्तर प्रदेशमें विनोबाजीकी यात्रा ११ महिने रही। आप ४९ जिलोंमें घुमे और २४० पडाव हुअे। कुलयात्रा २९१० मीलकी हुअी। १०,७८१ दान पत्रोंद्वारा २,९५,०५४ एकड़ भूमी इस यात्रामें

मिली। १४ सितंबर १९५२ को विनोबाजीने उत्तरप्रदेश छोडा। उत्तर प्रदेशके कार्यकर्ताओंने प्राप्त भूमीके वितरण की ओर शक्ति लगाई, साथही नवनिर्माण और ग्रामपुनर्रचनाकी तरफ भी कदम उठाया। १९५६ के अंततक ४२,२६७ परिवारोंमें १,४४,६२४ एकड जमीन बाँट दी। नवनिर्माण और ग्रामपुनर्-रचनाको अधिक महत्त्व दिया गया। जिला नैनितालमें शान्तिपुरी रायबरेलीजिलामें राधाबालमपूर और विनोबापुरी तथा उन्नाव और पोळीगीत जिलोंके कुछ ग्रामदानी गाँवों अथवा दानमें मिले लम्बे जमीनके टुकडोंपर नये गाँव बसाने और पुनर्रचना-काम किया गया। भूमिप्राप्तिका काम भी चलता रहा। २०,६७१ दाताजीद्वारा १,७८,६४१ एकड़ जमीन तथा २४१८ दाताजीद्वारा ६२,०३९ रुपये संपत्तिदान और ९ ग्रामदान प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त नवसमाज रचनाकेलिये आवश्यक लोकमानसकी तैय्यारी तथा जनशक्तिका निर्माण और सर्वोदयके नये जीवनमूल्योंकी स्थापना लोगोंके हृदयमें है, इसका भी निरंतर प्रांतव्यापी प्रयास चलता रहा। बाबा राघवदासजीकी अखंड पदयात्रा दो वर्षोंके संकल्पके साथ प्रारंभ हुअी थी। १३ अप्रैल १९५५ से २६ अप्रैल १९५७ तक आपकी यात्रा चली। आपका प्रखर ओजस्वी और तपस्वी व्यक्तित्व भूदान आंदोलनके लिये प्रकाशस्तंभही था। राघवदासजीकी पदयात्राकी फलश्रुति है समग्र ग्रामदान ६०; मील ६७०१ की यात्रा; ९५८८ दाताओंसे ४३,१९० एकड़ भूमी; ४६३४५) नकद साधनदान; ३६,८०६) का संपत्तिदान हुआ; ४१,५३७) का साहित्य जनतामें पहुँचा तथा भूदानयज्ञ पत्रिकाके २१३ ग्राहक बने। १९६० गाँवोंमें सभाएं हुई। अन्यदान-१५२३) का अनाज, ३६ बैल, १३१३ पेड, २६ कुए, १५ मकान, १८५ हत्यार अवजार।

नवम्बर १९५६ में भूदान-आंदोलनको एक नये मोड़से गुजरना पड़ा। इस क्रांतिकार्यके सफलतामें भारतके बच्चेबच्चेकी जिम्मेदारी है, यह जनताका आन्दोलन है, सबके वास्तविक हितके

लिये है। जनता इसे अपने कन्धोंपर उठा ले, इस उद्देश्यसे पळनीमें तंत्रमुक्ति और निधिमुक्तिका क्रांतिकारी और ऐतिहासिक निर्णय लिया गया। उत्तर प्रदेशके कार्यकर्ताओंने खुले दिलसे इस निर्णयका स्वागत किया। मैनपुरी जिलेके धिरोर ग्राममें राघवदासजीकी अध्यक्षतामें एक बैठक और दूसरी सेवापुरीमें पळनीके निर्णयके बारेमें हुई। फलतः प्रदेशीय और जिलोंकी भूदान-समितियाँ १ जनवरी १९५७ से विघटित हो गईं।

(२३) बाबा राघवदासजी अपने शरीरकेलिये अन्नवस्त्रादिमें कमसे कम व्यय करते रहे। आप जीनेकेलिये खाते थे, खानेकेलिये नहीं जीते थे। एक बार विनोदसे आप अपनी जयन्तिको स्वच्छताजयन्ति कह रहे। स्वच्छतामें लक्ष्मीका निवास होता है। सरस्वतीको भी "शुभ्रवस्त्रावृत्ता" कहा गया है। अर्थात् लक्ष्मी और सरस्वती दोनोंका निवास स्वच्छतामें है। ज्ञान और आनंद स्वच्छही माने गये हैं। अिसीलिये राघवदासजी स्वच्छताको बहुत महत्त्व देते थे। आपने देवरिया-बरहजमें कई बार गन्दे पाखानोंकी सफाई की।

आपकी मधुर मुसकान और व्यंगतात्मक छींटकशी निराश सेवामें भी आशा भर देती थी। आपका दरबार शिवका दरबार था। भेदभावका मानो नामही नहीं। हमारे राष्ट्रके नेताओंमें राघवदासजी अन्तिम पंक्तिमें रहकर भी भारतीय राष्ट्रको और उसकी परम्पराको अच्छी तरहसे पहचानते थे। आपके हृदयमें ज्ञान और कर्म दोनोंका पूर्ण मेल था। गोस्वामीजीकी चौपाईयाँ सामने नाचने लगती थी जब राघवदासजीकी मूर्ती देख पडती थी।

साधुचरित सुभ सलिस कपासू।
तिरस विरुद्ध गुनमय फल जासू॥
जो सहि दुःख परच्छिद्र दराया।
वंदनीय तेहि जग जस पावा॥

आप हँसे तो गरीबोंके लिये और रोये तो भी गरीबोंके लिये। गरीबोंकेलिये दिनभरमें सैकडो पत्र लिखते थे। लिखनेका ऐसा

अभ्यास था कि चांदनी और अंधेरी रातमें भी कभी कभी लिखते थे। आपको किसी निजी सचीव और लेखककी आवश्यकता नहीं पडी। आपका कार्यालय आपकी झोलीमेंही था। यह जानकर विस्मित हुआ कॅप्टन मूर जो १९४२ में आश्रम जलानेकेलिये बडे चावसे आया था। आपने खुदकेलिये किसीसे याचना नहीं की और न कभी हाथही फैलाया। आप सदा निरासक्त भावसे रहे। सभी आपके थे, और कोई नहीं था। समयके आप इतने पाबंद थे कि शायदही कभी ट्रेन छुटी हो, यदि देर हो जाती थी, तो दौडकर हाँफते हुअे ट्रेन पकडकरही दम लेते थे।

राघवदासजी किसीसे अपनी सेवायें नहीं लेते थे। अपने संपूर्ण कार्य स्वयं करते थे। प्रातः तीन बजेही उठकर जभी सब लोग सोये रहते थे, आप नित्यकर्मसे निवृत्त हो जाते थे। कमजोरी और बीमारीकी अवस्थामें भी आप इस नियमसेही रहते थे। आपने अपने पास कभी एक पैसा नहीं रखा। अपने जीवनके अन्तिम चालीस वर्षोंतक कोई औंषधी नहीं लिये हैं। यहाँतक कि सीवनीमें जबतक आप चेतन अवस्थामें रहे, औषधका आग्रह स्वीकार नहीं किये हैं। आपके अचेतन अवस्थामेंही औषधप्रयोग किया जा सका है। महान लोग अपनी इच्छासेही अपना शरीर छोडते है। जबतक आप अपनी आवश्यकता इस लोकमें समझते हैं, तबतकही रहते हैं। १५ जनवरी १९५८ को राघवदासजीका देहान्त हुआ। १२ तारीखकोही आप चेतनहीन हो गये थे। और अचानकही। समय तो राघवदासजीका वही था प्राण निकलनेका। किन्तु सूर्य दक्षिणायन थे। १४ तारीखके बादही उत्तरायण होते। इसीलिये राघवदासजीका प्राण रुका रहा और उत्तरायण होनेपरही प्राण निकला है। यह बात निश्चयही आपकी महान् आत्माकी प्रतीक है। कुछ दिनों पहले आश्रमके कुछ लोग राघवदासजीसे मिलने मिरझापूरमें गये थे। जहाँ किसी बातकी चर्चामें आपने यहाँतक कहा था कि "मैं भूदानही का काम करते करते मर जाऊँगा।"

यात्री बाबा राघवदास

सोलापूर १९५७

क्रांतिवीर बिस्मिल्लाकी समाधि–पूजा

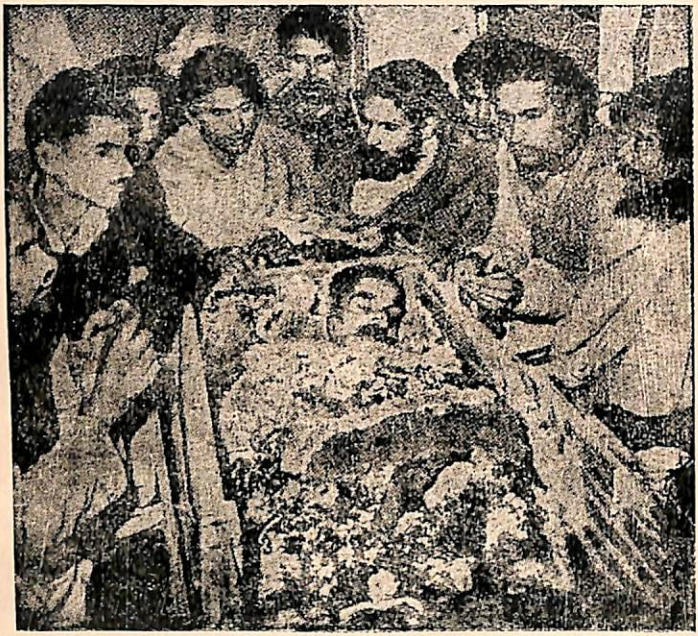

प्रयाग–स्टेशनपें–अंतिम दर्शन

तो भी चतुर्दिक् दाढी एवं केशसे घिरा हुआ, ब्रह्मतेजसे चमचमाता हुआ हास्यपूर्ण वह मुखमण्डल क्या कभी भुलाया जा सकता है ? कटिमें छोटीसी कौपीन और शरीरपर वह मुदाब (बरहजके पास भेडिदारोका एक गाँव) का कम्बल जब याद आता है, यंत्रोके समान वह तीव्र गति जब स्मृतिपर झूलने लगती है, तो मूंगफलीपर चार चार दिन रहकर, जमीनपर सोकर, उपवास कर, सागसत्तू खाकर, रातभर जागकर, पैदल चलकर, लोगोंकी सेवाकेलिये सतत प्रस्तुत रहनेवाला नेता बाबा राघवदास आँखोंमे भर कर सुनाता है कि जीवन नहीं है सौंदर्यका झूला, जीवन है कर्तव्योंका एकही मामला ।

जो सर्वश्रेष्ठ वस्तु उत्तराधिकारमें समस्त मानवसमाजको राघवदासजी दे गये है, यह संसारके संपूर्ण वैभवसे भी उच्च और महान् है । भगवान् बुद्धकी भाँति एक बार फिर बाबा राघवदासजीने दश पारमिताओंपर सिद्धि प्राप्त की । दान–पारमिता, शीलपारमिता, क्षान्तिपारमिता, नैष्कम्प–पारमिता, मैत्री–पारमिता, वीर्य–पारमिता, सत्य–पारमिता, प्रज्ञापारमिता, उपेक्षा–पारमिता, समाधिपारमिता की अपूर्व साधना आपके जीवनमें निखर गई थीं और आप संसारसे इन्हीं शक्तिओंके बलपर बहुत ऊँचे उठ गये थे । राघवदासजी यथार्थतः संन्यासी थे । आपको एक झोला पर्याप्त था । भोजनकी चिंता नहीं रहती थी । कभी कभी तो कच्ची मूंगफलीपर महिनों आप रह करा सकते थे । कोल्हापुरी चप्पल पहना करते थे । वह चप्पल बडे टिकाऊ और मजबूत होते है । बहुधा आप पैदलही चला करते थे । आप इतना तेज चलते थे कि आपका शरीर दैवी कान्तिसे दमकता रहता था । आपके पैर और तल्लवे बडे सुकुमार थे । गुलाब और पारलकी लाली आपकी तलवोंकी लालीके समक्ष फिकी लगती थी ।

दीपक जलता है अंधकार दूर करनेके लिये । महामनाओंका अवतार होता है संसारमें कल्याण और कल्याण फैलानेके लिये ।

राघवदासजीका जीवन सर्वतोमुखी सेवाही है। सांस्कृतिक भावोंमें विभोर, दमतापाशसे आबद्ध, यातनाओंकी उद्धोलित भावनाओं, एवं समृद्ध और सुखी राष्ट्रके निर्माणकी बलवती स्पृहाने राघवदासजीको अद्‌भुत शक्ति, जिज्ञासा और कार्यक्षमता प्रदान की थी। आपका लक्ष्य रहा था– "न तनसेवा, न मनसेवा, मुझे इष्ट है जनसेवा।"

तो भी राघवदासजी अपनी धुनके पक्के थे। अपने विचारोंको कार्यरूपमें परिणत करना भले प्रकार जानते थे। आप सर्वदा कुछ ना कुछ करते रहते थे। सूत कातते, बातें करते, दूसरोंको आदेश देते तथा पत्र लिखते भी देखे थे। जिस कामको आप अनुचित और जनकल्याणका विरोधी समझ जाते थे उसे नष्ट करनेमें आपको रंचमात्र भी भय अथवा संकोच नहीं होता था। वैसेहीं जब अपनी गलती मालूम होती थी, तो स्वयं अपना कान पकडकर उठते बैठते थे, ताकि प्रायश्चित्त हो जाये। आपकी रायसे "सेवा वही है, जिसमें वैयक्तिक भौतिक सुखका बलिदान हो जाय।" सन्त विनोबाके शब्दोंमें "भक्तप्रवर राघवदास निखर चुके थे। शुद्ध सुरवारी थे।" ब्रह्मीभूत होनेके समय आपकी आत्माकी शुद्धी अपनी पराकाष्टाको प्राप्त कर चुकी थी। जीवनदानका, आत्मोत्सर्गका यह अद्वितीय प्रमाण इतिहासमें कम मिलता है। "कीर्तिर्यस्य स जीवति।" कर्तव्यमें कसर करना आप कायरका काम मानते थे। आपने अपना राघवदास नाम लोककल्याणार्थ जीवन बिताकर सार्थक किया।

चालीस सालकी सार्वजनिक जीवनिकामें कोई स्थान ऐसा न होगा उत्तरप्रदेशमें, जहाँ राघवदासजी पहुँचे न हो। केवल एकही कामनासे कि जनताका भला हो। किसी बातको हाथमें लिया कि फिर उसमें आप तन्मय हो जाते थे। "योगः कर्मसु कौशलम्।" और "स्वकर्मणा प्रभुमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।" ये आपके उद्‌घोष थे। ऐसी कोई संस्था नहीं थी, जिसके लिये राघवदासजीने पितारूप बनकर सायास न दिया हो।

आप करीब सव्वा तीन सौ संस्थाओंके तो अध्यक्षही थे। आपके कारण संथाएं इतनी आश्वस्त एवं निश्चित रहती थीं कि कोई बडीसे बडी जिम्मेवारी लेनेमें नहीं हिचकती थी और आप भी उस जिम्मेदारीको जी–जानसे पूर्ण करनेमें जुट जाते थे। अपने आपमें आप संस्थारूप थे। स्वयं परमहंस, वीतराग होते हुए भी समाजके जीवनमें स्फूर्ति, नवचेतना लानेका सर्वदा प्रयत्न करते रहे। हमारा भारतराष्ट्र हृष्ट, पुष्ट, समृद्ध हो, इसके लिये सर्वदा राघवदासजी प्रयत्नशील रहे।

सारांशमें अद्वितीय राघवदासजीने लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, लाला लजपतराय एवं महामना मालवीयजीके प्रकाशोंसे अपना एक चतुष्पुंज प्रकाश बनाया और परमपूज्य अनंत महाप्रभुकी शिक्षानुसार उसका व्यवहार करके चारों महापुरुषोंकी दिव्य शक्तिको गाँवगाँवमें और कामकाममें प्रसारित किया। फलतः अपने जीवनको इतना धन्य धन्य बना दिया कि पार्थिव शरीरान्तके पश्चात् राघवदासजीका यशोजीवन जनताकी कृतज्ञतामें शुरू हुआ है। श्रीरामदास–स्वामीजीके उपदेशानुसार "मर जाये तो भी कीरतसे जिये।"

यही जीवन अव्वलमें राघवदासजीका हुआ है। एक बार महात्मा गांधीजीने राघवदासजीके बारेमें लिखा कि "हमें उनके बारेमें लिखनेके बजाय यह अच्छा होगा कि हम उनके चरित्र–आदर्शोंपर चलनेका प्रयत्न करें।'

(२४) अशरण–शरण बाबा राघवदासजी गीताके कर्म–योगकी सजीव प्रतिमा थे। आपने एकसौचौतालीससे अधिक संस्थाओंका उद्भावन–संचालन किया। आप रागद्वेषसे शून्य, मानवताके सच्चे पुजारी थे।

"यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय, मुक्तसंगः समाचार॥"

राघवदासजीने उक्त श्लोकका समन्वय करते हुअे अपना जीवन बीताया ।

भारतीय संस्कृतिपर राघवदासजीका अखण्ड विश्वास था । आपके जीवनका हरएक पहेलू भारतकी पुरातन संस्कृतिसे सिक्त था । आप कार्यकर्ताओंका सहारा थे । पर विना परखे, हाथ नहीं धरने देते थे । आपकी स्वयंनियंत्रणा कडक थी । रोज रातको पौने तीन बजे उठकर (कडाकेके जाडोंमें भी) रातको रखवाये गये (बरफ जैसे क्यों न हो ?) पानीसे नहाना, प्राणायाम-आसन करना, ठीक चार बजे प्रार्थना, प्रवचन सव्वाचार बजे चल देना, ठीक समयपर सब काम लेना–करना आपका स्वभाव बन रहा था । असुविधा–हैरानीपर आप अप्रसन्न होते नहीं देखे गये । अपनी सभाओंमें दरिद्रको सभापतिका स्थान–आसन देनेमें आप अभिमान रखते थे । इससे या आपकी संस्थाओंमें कुछ काल्पनिक या सत्य डावडोलकी आलोचना भी करते थे । आप वह उनका हक मान लेते थे और उत्तर करते थे कि " मेरा काम तो हवा बाँधना है । उसे पूर्ण और स्थायी बनाना नवयुवकोंका काम है ।" और यह भी कहा करते थे कि–

" जीवन्तु मे शत्रुगणाः सदैव ।
येषां प्रसादात् सुविचक्षणोऽहम् ।।
ये ये यथा मां प्रतिबाधयन्ति ।
ते ते तथा मां प्रतिबोधयन्ति ।। "

सारांश, प्रतिष्ठा, प्रशंसा या पदसे आप कोसों दूर भागते थे । पहले तो आप अपना चित्र भी नहीं खीचने देते थे । आप अपने कार्योका प्रकाशन भी नहीं चाहते थे । राघवदासजीका चित्र था विशुद्ध गंगाजल । आपकी मधुताने आपकी कर्मठतामें अधिक सहाय्यता पहुँचाई । महात्मा गांधी, महामना मालवीय, पूज्य नेहरू, राष्ट्रपति डॉक्टर राजेंद्रप्रसाद, पंडित गोविंद वल्लभ पंत,

सन्त विनोबाजी भावे और टंडनजी आदि राघवदासजीको साधु और कर्मठ कार्यकर्ताके रूपमें अच्छी तरह जानते थे।

" जो कोई हो रञ्जित दुःखित।
उसे प्यार जो करता है॥
वह साधु है जान लीजिये।
वहाँ देखिये, परमात्मा है॥ "

महाराष्ट्रके सन्तशिरोमणि तुकारामके इसी वचनकी समर्पकता जनसामान्य राघवदासजीमें दिखाई देती थीं। फिर आप

" हिला-हिलाते बहुत जनोंको।
कितने समूह कर उल्हासित॥
समर्थ गिनते जन है उनको।
करते है जो सदैव जनहित॥ "

इस राष्ट्रगुरु रामदास स्वामीजीके दर्शनसे चल रहे थे। इसका यह द्योतक था कि रास्तेमें चलते चलते देखभालमें कोई भी देहाती आये तो राघवदासजी उसका समाचार ले लेते थे और आपको जनपद साष्टांग नमस्कारसे सन्मानित करते थे। भाव यह था कि राघवदासजी उत्तर-प्रदेशमेंसे हरएक आदमीको अपना आप्त या सगासा मालूम थे। जनतामें जनार्दन देखनेवाले राघवदासजी अपने हरएक कार्यका शुभारम्भ तुलसीदासजीके विनयपत्रिकाका पद्य

" रघुवर, तुमको मेरी लाज। "

बडे प्रेमसे गाया करके, करते थे। आपके मुखसे

" राजाराम, राम, राम, सीताराम, राम, राम। "

की ध्वनि जब प्रस्फुटित होती थी, खास वातावरण भक्तिभावनासे गुँज उठता था। वैष्णव होते हुअे भी राघवदासजी भगवान् बुद्धके प्रति इसलिये आकृष्ट हुअे कि आपका जन्मस्थान आपके बिहार, आपके वे महान् चैत्य सभी खाण्डर हो रहे थे।

आज वे उपेक्षाका स्थान छोडकर अपेक्षाके आसनपर विराजमान है।

जैसे प्रत्येक कार्यके अन्तमें राघवदासजी कहा करते थे–

" समर्पये इदं कार्यं श्रीशाय जनतात्मने ।
अनेन प्रीयतां देवो भगवान् पुरुषः परः ।।

यही करते हुअे राघवदासजीने, मानो, अपना यज्ञमय जीवन पूर्ण किया । उड गयीं फुलवा, रह गयी वास ।

(२५) बाबा राघवदासजी संस्थामय, संकल्पमय और प्रयत्नमय थे । आपने अपना प्रत्येक साँस सेवाकेलिये लीया और सेवा करतेही अपने शरीरका त्याग किया । आपके जीवनपर श्रीतुलसीदास–रामायण और गीताका बडा प्रभाव था । हिन्दु संस्कारोंमें आप लोकमान्य तिलकजीके अनुयायी थे । फिर अपने गुरु योगिराज अनंत महाप्रभुजीकी आपके जीवनपर गहरी छाप पडी । सेवाके संस्कारोंमें सबसे अधिक प्रभाव आपपर महात्मा गांधीजीका था । आप जागरूक थे और आपमें संकल्पकी दृढता और ध्येयध्यासकी तेजस्विता थी । आपमें पिताजीकी सजग दृष्टि माताजीकी सहज प्रेमलता, बन्धुका सख्य, पुत्रकी सेवा थी । आपमें ब्राह्मणका त्याग और तप, क्षत्रियकी दृढ़ता और तेज, वाणिक या वैश्यकी कार्यमग्नता तथा शूद्रकी सेवावृत्ति एकसाथ थीं । आप शीलकी मूर्ति और" सत्यं, शिवं,सुंदरम्"का प्रतीक थे । कालमानका मूल्यमापन आप अच्छी तरहसे कर सकते थे । दरिद्रता और अक्षरशत्रुता हटाने–मिटानेमें आपका जीव गुञ्ज रहा करता था । आपने अपना काम किया । किसीके सहारे आप कभी न चले ।

बाबा राघवदासजीका जन्म महाराष्ट्रमें हुआ । आपने अपना कर्मक्षेत्र उत्तर–प्रदेशको बनाया । और ? मध्य–प्रदेशमें आपने अपना आत्मविसर्जन किया । आपकी प्रकृतिही बलिदानी थी । " परहित द्रवे तो संत पुनीता । " इस श्री गोस्वामीजीकी

वाणीको राघवदासजीने अक्षरशः सिद्ध कर दिया। राजर्षि टंडनने स्पष्ट शब्दोंमें कहा था कि "बाबाजीका व्यक्तित्व असाधारण रहा है, उनके समान त्याग और तितीक्षा मैंने अपने प्रदेशमें अन्य सार्वजनिक सेवकमें नहीं देखी" यह था राघवदासजीके ऊपर हुएले सन्तवाणीका प्रभाव। सन्तसाहित्यके प्रति राघवदासजीकी इतनी निष्ठा थी कि, कबीर, सूर, मीरा और तुलसीके भजन आपकी जीवनचर्याके अंश बन गये थे।

"सुनेरी मैंने, निर्बलके बल राम।"

भजन तो आपको बहुतही प्रिय था। तो भी आप एक व्यावहारिक और विधायक कार्यकर्ता थे। महान् साधक थे। सेवा और नम्रताकी मूर्ति थे। आप किसीके साथ अन्याय नहीं चाहे। उत्तरप्रदेश-विधानसभाके अध्यक्ष आत्माराम गोविन्द खरेजीके शब्दोंमें "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावनाके सच्चे पुजारी बाबा राघवदासजी थे। यही कारण है कि परमहंसाश्रम बरहज अपना होते हुअे भी आपने कभी उसके प्रति चिन्ता नहीं की। आस्तिकता राघवदासजीके अन्दर इतनी थी कि बडेसे बडे व छोटेसे छोटे कार्यमें ईश्वरकाही अवलम्ब मानते थे।

"न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं, ना पुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥"

इस सिद्धान्तका सच्चा पोषक कर्मयोगी महापुरुष बाबा राघवदासजी हो गये। कृत्रिमताका लेशमात्र भी स्थान आपके जीवनमें नहीं रहा। आपका ध्येय था—

"कार्यं वा साधयेत्, देहं वा पातयेत्।"

आपने जो दीप जलाया उसे तेलवातों देकर सतत जलाये रखना है।

बाबा राघवदासकी
विचारधाराका कुछ अव्वल परिचय।

[१]

कॅम्प म्हैसूर
२७-६-५७

श्रीमान् महोदय संपादक ग्रामस्वराज्य,

प्रणाम। बहुत दिनोंके बाद इस पत्रद्वारा आपके दर्शन कर रहा हूँ। आप जानतेही हैं कि पूर्वी जिलोंमें अकाल, अतिवर्षा तथा अनावर्षा और घनी आबादीके कारण जीवन-निर्वाहकी बिकट समस्याअें खडी हो रही है। एक समय था जब इन जिलोंके बहुतसे गरीब लोग, शाम, बर्मा, कलकत्ता आदि स्थानोंपर आकर किसी तरह गुजारा किया करते थे। इधर बेकारी और दैवी संकट, इन दो पाटोंके बीचमें इन जिलोंकी जनता त्राहि त्राहि पुकार रही है। इसको दूर करनेकेलिये चिंतन करना अत्यंत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम बन गया है। भूदान-कार्यकर्ताकी हैसियतसे नहीं, परंतु एक पूर्वी जिलोंके तुच्छ सेवककी बजहसे बारबार यही मनमें आता है कि वर्षोंका यह सर्वमान्य-संकट है, तो उसको सबको हल करना उचित होगा। हम यह देखते हैं कि इन संकटोंमें छोटेबडोंका कोई भेद रहताही नहीं। जब चारों ओर पानीही पानी और सुखाही सुखा रहेगा, तो यह भेद रहेगा कैसे? इसलिये, अगर हमारे गाँवोंके सुलझे हुअे, सहृदय भाईबहेन थोडी उदारतासे काम ले, तो इन जिलोंमें

ग्रामदान एक ईश्वरीय देन साबित होगी। अभी म्हैसूरसे सभी प्रमुख राजनैतिक दलोंके नेताओंका जो संमेलन हुआ था, उसका निष्कर्ष बयानके रूपमें जो हमारे सामने है, उससे स्पष्ट जाहीर होता है कि इस ग्रामदानकी मान्यता चंद लोगोंतकही सीमित नहीं, बल्कि वह राष्ट्रीय संकल्प है और हम यह अभिमानसे कह सकते है कि इन पूर्वी जिलोंने भारतमाताके आवाहनपर अपना सब कुछ न्योछावर किया है। उसके मुकाबिलेमें भगवान्‌को भोग लगाकर उसीको प्रसादरूपमें ग्रहण करनेका (हाँ ! यह प्रसाद सबको बाँटकर दिया जाता है।) हमारेलिये संकट हल करनेका योग्य मार्ग साबित होगा। उसी ग्रामदानसे न केवल खेतोंका सवाल हल होगा, बल्कि ग्रामोद्योग, स्वराज्य, आवास और शिक्षा, इन महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंका हल करनेमें सुविधा होगी।

भगवान् करे और यह शुभ दिन हम सबको दिखावे जब पूर्वी जिले अपने बलबूतेपर खडे होकर हमारा मार्गदर्शन करें। १८५७-५८ में हमारे पूर्वी जिलोंके जिन महान् वीर पूर्वजोंने आबादीके लिये अपने सर्वस्वकी बाजी लगाई, उनके प्रति आजाद भारतमें उनके प्यारे वंशजोंकी सक्रिय और युगधर्मकी श्रद्धांजली होगी। मनुष्यकी विशेषता यही है कि वह संकटको सुसंधिमें परिणत कर दे। जैसे पूज्य बापूने निःशस्त्र भारतको अहिंसक सत्याग्रहके रूपमें खडा कर दिया। जहाँ ग्रामोंके नीचेसे शक्तिका स्त्रोत बहना शुरू हुआ, वहाँ बाहरी शक्तियाँ भी अपने आपही मददके लिये पहुँचनेवाली है। यह संसारका प्रसिद्ध अनुभव है कि भगवान् उन्हीकी मदद करता है, जो अपने आप खडे होते है। समय कम है, पर जो भी है, वह ठीक ठीक काममें लाया जाय, तो उससे भी बहुत कुछ होगा।

सबको प्रणाम।

आपका

राघवदास

[२]

श्रीमान पंडितजी श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, प्रणाम। आपका अमर शहीद+ श्रीरामप्रसादजी बिस्मिलकी

+ **पंडित रामप्रसाद बिस्मिल:–** पंडित रामप्रसाद बिस्मिलका जन्म सन १९०० के लगभग ग्वालियर राज्यके किसी गाँवमें हुआ था। बादमें आपके पिता पंडित मुरलीधर सपरिवार शाहजहाँपूरमें आकर ठहरे। आप पंडित गेंदालाल दीक्षितके साथ मैनपुरी षड्यंत्रमें शामील थे। उस समय आप अंग्रेजी दसवी कक्षामें शिक्षा ले रहे थे। गेंदालाल दीक्षितजी पकड जानेपर आपने उन्नीस वर्षकी आयुमें अपने साथ पंद्रह–सोलह विद्यार्थी साथी लेकर पहली डकैती की। मैनपुरी षड्यंत्रमें वॉरंट निकलनेपर आप फरार हो गये। अिन दिनों आपको बडे बडे कष्ट सहने पडे। कई कई बार तो आपको पैसा पास न होनेके कारण घास तथा पत्तियाँपर गुजारा करना पडा। नेपाल, राजपुताना, आगरा आदिमें घूमनेपर एक बार आपने अखबारमें पढा कि सम्राटकी घोषणामें आपपरसे भी वॉरंट हटा लिया गया है। आप तुरन्त वापिस घर आये। रेशमके सूतका कारखाना खोलकर कामकाजमें लग गये।

परन्तु थोडेही दिनोंमें आपके क्रान्तिदलमें संघटनका काम फिर शुरू किया। आप उत्तम कवि होनेके अतिरिक्त देवियोंकी मर्यादाके रक्षक भी थे। आपमें सामरिक संघटनकी शक्ति अद्‌भुत होनेपर भी अन्य प्रकारके संघटनोंकी शक्ति बहुत कम थी। आपको काकोरीट्रेन डकैतीमें फाँसीका दण्ड दिया गया। आपको १९ दिसंबर १९२७ को गोरखपूरमें फाँसी दी गई।

पं. रामप्रसाद बिस्मिल धार्मिक वृत्तीके आर्यसमाजी थे। आपके हृदयमें देशके प्रति असीम श्रद्धा तथा अगाध भक्ति थी। आप असाधारण शारीरिक बलशाली, साहसी तथा बुद्धिमान थे। अपने पुत्रके फाँसी पानेके पश्चात् आपकी पूजनीय जननीने कहा था—"मैं पुत्रकी अिस प्रकारकी मृत्युसे दुःखी नहीं हूँ। तुम लोग सत्यको मत त्यागना। मैं रामसाही पुत्र चाहती हूँ।"

आत्मकथापर लेख पढ़ा (तारीख २२–१२–१९५७ के साप्ताहिक हिंदुस्थानमें ।) मुझे उससे बडी प्रेरणा मिली । क्या उस पुस्तकको मैं पढ सकूंगा ? मैंने शाहजहाँपूर पदयात्रामें उनकी पूज्य माताजीके दर्शन किये थे । उनके योगाभ्यासके स्थानपर मैं गया था । जब गोरखपूरमें उनको फाँसी हो गई थी, उस समय उनके पावन दर्शन करनेका अवसर मैं पा चुका हूँ । उनकी अस्थिको ताम्रपात्रमें मैंने रखकर (आश्रम बरहज देवरियामें) उसपर चबुतरा बनाया है । इस क्रांतिकारी पुरुषको मैं कैसे भूल सकता हूँ ? उनके साथी श्री चंद्रशेखर आझाद भी साथमें रहे हैं । उनसे भी मेरा फरारी जीवनमेंभी कुछ सहयोग रहा है । इस आत्मकथाका परिचय देकर मेरेलिये तो आपने एक आवश्यक प्रेरणा दी है । मेरा पत्रोत्तर पता:– श्री कटरे वकील, बालाघाट, मध्यप्रदेश ।

–राघवदास

[३]

श्रमदान पदयात्रा,
पडा–रावरी जि. दलिया
ता. १४–९–५७

श्री महामान्य महोदय, प्रणाम ।

बहुत वर्षोंके बाद इस पत्रद्वारा आपके दर्शन कर रहा हूँ। आप स्वस्थ होंगे ।

पत्रोंमें पढा कि पूनाके प्रसिद्ध नकलाकार श्री अप्पासाहेब भोंडेजीकी श्री लोकमान्य (तिलकजी), श्री अणेसाहेब तथा श्री डॉ. परांजपे साहेब, इनकी नक्कल उन्होंने आपके सामने की थी जिसको आपने पसंद किया था ।

महाराष्ट्रके प्रसिद्ध सन्त श्रीसमर्थ रामदासजी महाराजकी ३५० वी जयन्ति १९५८ में है । उसकेलिये हमारे उत्साही मित्र तथा श्रीसमर्थ रामदासके अनन्यसेवक श्रीयुत बाबुराव वैद्य

सातारानिवासी उत्साहसे लगे हुअे थे। उनकी इच्छा थी कि श्री लोकमान्य तिलकजीने जो व्याख्यान श्रीसमर्थ महाराजपर दिया है वह श्री भोण्डेजी तयार कर ले तो उसको रेकार्ड कर दिया जायेगा जिसका उपयोग ३५० वी जयन्तिपर होगा और अन्य अवसरोंपर, खासकर छात्रोंके सामने उसका इस्तमाल किया जाएगा। यह बात मैंने श्री भोण्डे साहेबसे कही। वे राजी हो गये, उन्होंने व्याख्यान तयार किया, एक निश्चित तिथिपर उसका रेकार्ड किया जानेवाला था। पर दुर्भाग्यसे इसी बीच (८ अगस्त १९५७) श्री बाबूरावजी (वैद्य) का स्वर्गवास हो गया। वह काम अधूरा रहा गया है। मेरे मनमें आया कि आपसे निवेदन करूँ कि यह कार्य हो जाय तो अच्छा। इसीलिये यह निवेदन करनेकी धृष्टता कर रहा हूँ। देखिये, कुछ हो सके तो। आपके मुख्य मंत्रि श्री माननीय चव्हाणसाहबभी उनको जानते होंगे। मेरे मित्र श्री कृष्णराव भोण्डे पूना आपसे मिलेंगे या, लिखेंगे। कृपया पत्रोत्तर पूना महाराष्ट्रीय व्यायामशाला श्रीकृष्णराव भोण्डेके पतेसे भेजा जाय।

आपका
राघवदास
(बरहज) देवरिया।

[निजीसेवामें–श्रीमहामान्य श्रीप्रकाशजी, राज्यपाल, मलबारहिल, बम्बई.]

[४]

कुम्भकर्णी विषमता कैसी मिटेगी ?

ले. **बाबा राघवदासजी**

बचपनमें मैंने माँसे पूछा था कि कुम्भकर्णके पेटमें किस प्रकार बैल, भैंस, हाथी, घोडे जाते थे ? पर जब मैं अपनी चारों ओर दृष्टि डालता हूँ, तो वह समझमें आता है।

सन (१९) ५२ में लखनौ स्टेशनपर एक विदेशी मित्रसे (मैं) बात कर रहा था। वे मुझसे बोले कि जितनी विषमता वेतनमें आपके देशमें है, उतनी और किसी देशमें नहीं है। इसलिये आपके देशमें जबतक वह विषमता, समझने योग्य विषमताकी बराबरीमें नहीं आती, तबतक भीतरही भीतर आग धधकती रहेगी। किसीभी समय उसका विस्फोट हो सकता है। आजकी हडताले तो उसीकी पूर्व–सूचना मात्र है।

जिस देशमें महात्मा गान्धीकी साधना और सत्यनिष्ठाने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली और जिन्होंने अपने आश्रममें देशके एक महान् नेताकी जूठी उठाते समय कहा था कि हमारे आश्रममें कोई भी नौकर नहीं है, हम सब मिल जुलकर (काम) कर लेते हैं, उस भव्य पुरुषके देशमें हुजूर और मजूरके वेतनमें इतनी विषमता, जिसे संपन्न विदेशी लोग भी बुरी तरह अनुभव करें, चिन्ताकी बात है।

ग्रामदान, जिससे जमीनवाले स्वेच्छासे अपना स्वामित्व विसर्जन कर गाँवोंके बेजमीओंके साथ समरस होते हैं, उसका अनुकरण हमारे वेतनभोगी मित्र भी कर सके, तो वह अधिक समयानुकुल होगा। विनोबाजीने एक बार कहा था कि विषमताको मिटानेकेलिये एक सरल रास्ता वह है कि सब छोटेमोटे अपना वेतन मिलनेपर, वह एकत्र कर ले और फिर आवश्यकतानुसार बाँट ले।

[५]

जैसे लोकमान्य तिलकजीने कहा था कि "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, उसको हम लेकर रहेंगे।" वैसेही गाँवकी रक्षा तथा प्रतिष्ठा कायम करना, उसकी आर्थिक, सामाजिक विषमता मिटाकर उसमें सुमति, संपन्नता लाना हमारा अधिकार है। हमारे बच्चोंको कोई खिलाये, पालनपोषण करे, तो हम लज्जाका अनुभव करते हैं। हमारा हक्क छिनासा लगता है। वैसे हमारे गाँवका कोई पालन पोषण-रक्षण करनेका दावा करे, यह

हमारे अधिकारमें खलल् डालना है। इसको सहन न करना हमारा धर्म है। हम गाँवका प्रबंध स्वयं करें, यही तो ग्रामराज्य है। और यह हमें करना है। गाँवके जमीनका स्वामित्व गाँवका है, जिससे गाँवमें परिवारकी भावना बनी रहे। धरती माँ है–हमारे गाँव परिवारका केंद्र। इसलिये हमारा यह हक्क है कि यह परिवारिक भावना जागृत करनेकेलिये गाँवके छोटे–बडे ग्रामदानकी माँग उन लोगोंसे करें, जो अपने छोटेसे परिवारमें चिपटे हुए, मोह किये हुए हैं। ग्रामराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, उसको लेकर रहेंगे। यह संकल्प सभी सहृदयवाले भाईबहनोंको करनाही चाहिये। ग्रामराज्यकी बुनियाद है ग्रामदान, यह स्मरण रहे।

–राघवदास (४–३–५७)

[६]

कॅम्प म्हैसूर
१८–९–५७

१८५७–५८ में हमारे पूर्वी जिलोंके जिन महान् वीर पूर्वजोंने आजादीकेलिये अपने सर्वस्वकी बाजी लगाई, उनके प्रति आजाद भारतमें उनके प्यारे वंशजोंकी सक्रिय और युगधर्मकी श्रद्धांजली होगी। मनुष्यकी विशेषता यही है। कि वह संकटको सुसोचमें परिणत कर दे। यह संसारका प्रसिद्ध अनुभव है कि भगवान् उन्हींकी मदद करता है, जो अपने आप खडे होते हैं।

आपका
राघवदास

[७]

श्रीबुद्ध एशिआई भाषा महाविद्यालय
(डिग्री कॉलेज) कुशीनगर (देवरिया)
जुलाई २२, १९५४

श्रीमान् महोदय,

मैं कल दिल्लीसे कुशीनगर पहुँचा। दिल्लीमें श्रीराष्ट्रपति डॉ. राजेंद्रप्रसाद और श्री पं. जवाहरलालजी नेहरूसे एशिआई

भाषा महाविद्यालयके बारेमें बातचीत हुअी । उन्हे यह योजना बहुत पसंद आयी । स्वतंत्रताके दिवसपर एशिआई राष्ट्रोंके झंडे फहरानेका कार्यक्रम बना गया है । ..... अगर आप परिचित राष्ट्रोंमेंसे वहाँके महापुरुष, उनके राष्ट्रीय चिन्ह और अत्यंत लोकप्रिय ग्रंथकी एक एक प्रति अपने परिचितों, मित्रोंकेद्वारा इस संस्थाकी भेंट करवा सकें, तो छात्रोंको उन देशोंके प्रति उच्च भावना जागृत करनेमें सहायता मिलेगी, जिसकी आज आवश्यकता है ।

पिछले दो महायुद्धोंमें युरोप नष्टभ्रष्ट हो चुका है । युद्ध-प्रिय गोरे लोग अब एशिआमें अपनी आकांक्षा पूरी करनेमें लगे हुअे हैं । यदि हम एशिआई राष्ट्रोंमें परस्पर विश्वास पैदा कर सकें, तो आनेवाले तृतीय महायुद्धके रोकनेमें अपनी शक्ति भर हाथही बटा सकेंगे । इस दृष्टीसे इस एशिआई संस्थाद्वारा हम बहुत थोडीही क्यों न हो, सेवा कर पाएंगे । इस सेवामें आपका आशीर्वाद और प्रेरणा सदाकी भाँति मिल रहेगी ।

दानवीर श्रीमान
जुगल किशोरजी बिडला
गायघाट, काशी.

भवदीय
राघवदास

[८]

छोटे बच्चोंके विकासके लिये जो कि प्रयोग होते हैं उनका मैं हृदयसे अभिनंदन करता हूँ । उसकी सफलता मैं हृदयसे चाहता हूँ । देहातमें छोटे बच्चोंके लिये भी बिना भेदभावके साथ प्रयोग हों तो ऐसे कार्योंके प्रति मेरी हार्दिक सहानुभूति है। गाँवों बच्चोंकेलिये काम करने कार्यकर्ताओं और कार्यकर्मियोंकी बडीही आवश्यकता है । बालक राष्ट्रके भावी नागरिक हैं, नेता हैं, सेना हैं । इसीलिये इनका विकास करना, इनकी छिपी हुई शक्तिका दर्शन करना महत्त्वपूर्ण कार्य है ।

–राघवदास (४–१०–५४)

[९]

चिरंजीव राजाराम यास अनेक आशीर्वाद–

पत्र मिळालें आणि संमेलन रिपोर्टसुद्धां. चि. सत्यव्रत सध्यां श्रीप्रयाग येथें श्रीत्रिवेणीतटावर श्रीगीताज्ञानयज्ञाची व्यवस्था पहाण्यास गेला आहे. १९३० मध्यें ज्याप्रमाणें श्री पूज्य मालवीयजी महाराजांचे अध्यक्षतेखालीं तेथें ज्ञानयज्ञ आम्ही केला होता, तसाच या कुंभमेळ्याच्या अवसरीं श्रीगीता–प्रेस आणि चि. सत्यव्रत करीत आहे. माझी शिक्षा दोन वर्षांची आहे. म्हणून मी अद्याप सुटलों नाहीं. १९४२ च्या डिसेंबर महिन्यांत सुटेन.

श्री. दे. भ. बाबुरावांनीं (गोखले) कराडसंबंधीं विवरण दिलें आहे तें वाचून मनास संतोष वाटला.....ज्या कऱ्हाडांत मी इतके वर्षें राहिलों त्याविषयीं मला आपलेपणा वाटतो. त्याची कामगिरी, त्याचा नांवलौकिक ऐकून मनास फार समाधान वाटते. श्री. दे. भ. बाबुरावांनीं जी तालीक दिली आहे त्यांत दोन तीन गोष्टी मी जोडून देईन तर वावगें तर होणार नाहीं ना ?

(१) १९०८ श्रीराष्ट्रसूत्रधार श्रीलोकमान्य टिळकांना मुंबई हायकोर्टानें काळ्यापाण्याची शिक्षा दिल्याचा समाचार वाचल्यानंतर मराठी शाळा नं. १ च्या ५–६–७ इयत्तेच्या मुलांनीं हरताळ पाडला. अधिकारी वर्ग त्यांच्यावर रागावला. बरीचशी चौकशी झाली. (त्यावेळीं मी पांचव्या इयत्तेंत होतो.)

(२) श्रीपंजाबकेसरी लाला लजपतराय यांना अटक झाल्यानंतर कऱ्हाडांतील तरुणांला ह्या दुष्कृत्याबद्दल चीड आली. विरोध–प्रदर्शनाकरितां शुक्रवार पेठेच्या श्रीराममंदिरांत सभा झाली. श्री बाबूराव अंगापूरकरांनीं प्रामुख्यानें भाग घेतला होता. बऱ्याच जणांनीं त्यावेळेस स्वदेशीचें व्रत घेतलें. (त्यांपैकीं मी सुद्धां एक आहे.)

(३) १९०९ मध्यें श्रीकृष्णाबाईच्या उत्सवाच्या भोजन–प्रसंगीं दाढी काढणें शास्त्रीय का अशास्त्रीय हा वाद सुरूं

झाला. शेंकडो स्त्रीपुरुष जेवावयास बसलीं असतांना कांहीं तरुण केवळ (दाढी काढलेले) वाढावयास गेले असतांना जेवणारी मंडळी उठून गेलीं. त्यानंतर कांहीं दिवस हें प्रकरण बरेच दिवस माजलें होतें.

(४) श्री तीर्थस्वरूप बाबा (व्यंकटेश विठ्ठल कुलकर्णी, 'राजाराम' चे वडील) ची मृत्युतिथीसुद्धां देण्यासारखी आहे. श्री बाबा कऱ्हाडांत फारच लोकप्रिय होते. त्यांच्या शीला-संबंधानें हें प्रसिद्ध होतें कीं ते कधींच अन्याय करणार नाहींत. (तुमच्या घरीं) प्रतिरोज १०-१५ गाऱ्हाणीं तोडविण्या-करितां त्यांचेकडे येत आणि ते थोड्या वेळांतच त्यांचा निकाल करून देत असत. त्यांच्या निकालानें दोन्ही पार्टी प्रसन्न होऊन जातांना मी पाहिली आहेत. श्रीकृष्णाबाईच्या उत्सव आदि सार्वजनिक कामांत त्यांचा पुढाकार असे.

(५) ज्या प्लेगामुळें कऱ्हाडच काय पण साऱ्या सातारा जिल्ह्यांत कहर उडून गेला त्याचें भयंकर रूप त्या वर्षी दिसलें त्याचें स्थानसुद्धां तालीकेंत असल्यास कसें ? .....

(दक्षिण महाराष्ट्र साहित्य) संमेलनाच्या रिपोर्टांत मोडी अक्षर आणि शीघ्रलिपीविषयीं जें लिहिलें आहे त्याचें प्रत्यंतर माझ्यासुद्धां पाहण्यांत आहे.

मुंबईस श्री वेदशास्त्रसंपन्न कान्हेरेशास्त्री चातुर्मासांत श्रीमद्भगवद्गीतेवर प्रवचन करीत असतां आमच्या शेजारी श्री बाबुराव रायकर (पोलीस कमिशनर मुंबईच्या ऑफिसांत काम करणारे एक क्लार्क) राहात असत. ते आपलें ऑफिसचें काम संपवून तडक श्रीशास्त्रीजींच्या प्रवचनास जात असत आणि एक तासभर होणारें श्रीशास्त्रीजींचें प्रवचन तें मोडींत अक्षरशः उतरून घेत होते. दुसऱ्या दिवशीं सकाळीं जवळ जवळ २-२॥ तास बसून ते बाळबोधींत लिहित असत. हा त्यांचा उपक्रम २।३ वर्षे सारखा चालला होता. लिहून झाल्यानंतर ते श्रीशास्त्रीजींना दाखवीत

असत आणि शास्त्रीजींना त्यांत संशोधन करण्याची कदाचित्‌ही आवश्यकता पडत नसे. मोडींत लिहिणें (म्हणजे) शीघ्र लिपींत लिहिण्यासारखें कसें आहे हें उदाहरण मी कधींही विसरणार नाहीं. आणि तें एक दोन दिवसच नव्हे तर महिनेच्या महिने आणि तेंसुद्धां एकसारखें.

कऱ्हाडास जे साहित्यकार झाले आणि आहेत त्यांच्या सर्वांचा परिचय बाबुरावांनीं करून दिला, याबद्दलसुद्धां मी त्यांचा सदैव ऋणी राहीन. तरुणांकडून व्यवस्था करून घेणें हें सुद्धां शिक्षणार्हच आहे. पण ह्या संमेलनांत जे प्रसिद्ध साहित्यकार बाहेरून आले त्यांचे फोटो न पाहून मनाला कसेसेंच वाटलें. मला वाटलें, तें काम विसरून राहिलें. तसेंच कऱ्हाडांतून ज्या पुस्तकांचें प्रकाशन झालें त्यांचीं नांवें आणि मिळण्याचे पत्ते दिले असते तर बरें झालें असतें असें वाटतें. श्रीसंत सखूबाईचें कांहीं स्मारक कऱ्हाडांत आहे काय ? नसल्यास होऊं शकेल काय ? श्री. बाबूरावांना विचारा. या प्रांतांत श्रीज्ञानेश्वर महाराज, श्रीसंतसखुबाईविषयीं चर्चा आणि औस्तुक्यभाव वाढतच चालला आहे. श्री. बाबूराव आणि त्यांचे मित्रमंडळ भिन्न भिन्न प्रकारें कऱ्हाडची जी सेवा करीत आहे ती आधुनिक इतिहासांत सदैव संस्मरणीय होऊन राहील.

आतां चि. शकुंतला (राजाराम कुलकर्णी) काय शिकत आहे ? तिचें लाठीकाठीचें शिक्षण चालूं आहे ना ? मी तिला इकडील मुलींच्या समोर लाठीकाठी करून दाखविण्यास बोलाविणार आहे. ती तयार आहे ना ? शिकलेली असेल तरच ती हो म्हणेल ? नाहीं तर मग काय ? तिला लाठीकाठीचें काम आणि कवाईत स्वतः करतां आलीच पाहिजे, पण दुसऱ्याकडूनसुद्धां करवून घेण्याची पात्रता आली पाहिजे ! तरच तिचे येथील प्रयोग यशस्वी होतील.

सध्यां कापड महाग आणि अहमदाबाद वगैरे ठिकाणीं कापडाच्या गिरण्या कोळशाच्या अभावी बंद होत चालल्या आहेत.

युद्धामुळें कापडाचा प्रश्न मोठा बिकट होऊन बसणार आहे. इकडे कापसाचा भाव २१५ ते २२० रुपये खंडीपर्यंत आहे. इतका स्वस्त कापूस पूर्वी कधींच नव्हता. तेव्हां सासवडला जे सूत कातण्याचें काम शिकून आला आहां त्याचा प्रसार तुम्ही आणि श्री. बाबूराव आदि मंडळी करून सुताचा आणि कापडाचा प्रश्न सोडविण्यास मदत कराल तर कसे ?

श्रीसंतसखुबाईच्या स्मारकाप्रीत्यर्थ एकादी बायकाकरितां संस्था काढून तें कार्य चालविलें तर कसें ? ह्यावर विचार करून पहा आणि योग्य वाटल्यास त्याबद्दल त्वरित अंमल करण्यास चुकूं नका, हीच माझी हार्दिक इच्छा आहे. कळावें, हे आशीर्वाद

आपला
मामा

(ता. २४ जानेवारी १९४२ रोजीं पोस्टांत पडून ता. २९ जानेवारी १९४२ रोजीं कऱ्हाडांत मिळालेलें पत्र)

[१०]

स्वातंत्र्य रक्षणार्थ तपोमय जीवन हवें

(दैनिक लोकशक्ति पुणें स्वातंत्र्योत्सव अंक १५-८-४८)

लेखक– **बाबा राघवदास**

१५ ऑगष्ट आणि ३० जानेवारी आधुनिक भारताच्या इतिहासांतील स्मरण न बुजण्यासारख्या दोन तारखा ! त्यांना अविस्मरणीय करणाऱ्या घटनांतील अंतर मात्र केवढें विलक्षण ! –कित्येक शतकें आम्ही गमावून बसलों होतों तें १५ ऑगष्टला आम्हीं प्राप्त करून घेतलें आणि कित्येक शतकानंतर मानवतेला ज्याचा लाभ झाला होता त्याचें पार्थीव प्रतिक गमावून ३० जानेवारीस आम्ही पोरके बनलों.

वीर राणी लक्ष्मीबाई, स्वातंत्र्ययुद्धाचे नेते नानासाहेब पेशवे, रणझुंजार सेनापति तात्या टोपे यांच्या १८५७ सालांतील कर्तृत्वामुळें साऱ्या भारतांत महाराष्ट्राची ख्याति दुमदुमत होती.

१५ ऑगष्टला हिंदी राष्ट्राला स्वातंत्र्याचा साक्षात्कार झाला आणि स्वतंत्र भारताचा एक घटक या नात्यानें महाराष्ट्राची मान ताठ झाली.

पण त्याच महाराष्ट्रावर ३० जानेवारीला जगासमोर नैतिक अपराधी म्हणून दीनवाणें राहण्याचा प्रसंग गुदरला !!

ज्या महाराष्ट्राच्या साहित्याचा श्रीगणेशा आणि श्रीवृद्धि संतांनीं केली, कर्तव्यासाठीं मरणाला मिठी मारणारे सन्त ज्या महाराष्ट्रांत निर्माण झाले, त्याच महाराष्ट्रावर एका रामभक्त संताचा मारेकरी म्हणून शरमेनें चूर होऊन जाण्याची पाळी यावी.....

तेजस्वी व उज्ज्वल परंपरा राखण्याचा बाणा बाळगणाऱ्या महाराष्ट्रीय जनतेच्या श्रेष्ठ पूर्वजांच्या दिवंगत आत्म्यांना आज काय वाटत असेल !

येथेंच महाराष्ट्र थांबला नाहीं. त्यानें पुढें जाऊन शेंकडो निरपराध स्त्रीपुरुषांना आणि मुलाबाळांना देशोधडीस लावण्याचें श्रेय संपादन करून घेतलें. दंगल माजवून आपला दर्जा स्वतःच्या हातांनींच घसरवून घेतला. भारताच्या अन्य प्रांतांत पूर्वी पुणें, सातारा आदि नांवें घेतांना अभिमान व उल्हास वाटत असे, त्या ऐवजीं आतां भय वाटतें. केवढें दुर्भाग्य !

कुठें तो लोकमान्य टिळकांचा तेजस्वी महाराष्ट्र आणि अन्य प्रांतांत पोराबाळांनींदेखील संदेहाच्या दृष्टीनें आमचेकडे पहावें, ही स्थिति कोठें ? ४२ च्या चलेजाव-आंदोलनांत महाराष्ट्रानें पराक्रमाची शर्थ केली. पण आज ? पण आज पतनाच्या गर्तेंत कडेलोट झालेल्या महाराष्ट्राला परत वर येण्यासाठीं मोठी तपश्चर्या करावी लागेल.

शेकडो वर्षांच्या गुलामगिरीनंतर आपण स्वातंत्र्याच्या निरामय खुल्या हवेंत स्वच्छंद विहार करूं लागलों आहोंत. या संक्रमण-काळांत आमचेमध्यें राज्यशासनक्षमतेचा कमकुवतपणा

हा दोष वसत असणें अपरिहार्य आहे. या दोषाचा परिणामहि प्रत्ययास येत आहे.

छत्रपति शिवाजी महाराजांना योग्य सहकाऱ्यांचा संच लाभल्यामुळें राज्यस्थापनेंत व राज्यसंचालनांत यश मिळालें. आज आपणांस आपल्या नवोदित स्वातंत्र्याच्या रक्षणार्थ व जनतेच्या सेवेप्रीत्यर्थ शिवबांच्या त्या थोर सहकाऱ्यांप्रमाणें संघ-वृत्तीनें व प्रसिद्धि-विन्मुख होऊन काम करावें लागेल.

हें सतीचें वाण आहे ! स्वदेहास भस्मीभूत केल्यावरच सतीचें नांव जनतेसमोर येतें. राष्ट्राची भव्य इमारत रचली जावयाची आहे. या इमारतीच्या पायांतील दगड म्हणून रिचवून घेण्याची आपण तयारी ठेवली पाहिजे. तरच राष्ट्राची मजबूत इमारत तयार होऊं शकेल. नांवलौकिक आणि अधिकार यांना आपण हापापलेले असूं तर अप्रत्यक्षपणें तो देशद्रोहच आहे हें आपण विसरतों.

स्वातंत्र्यप्राप्तीकरतां जसें व्रत हवें, तसेंच स्वातंत्र्यरक्षणा-करतांही अखंड तपोमय जीवन पाहिजे.

आमच्यापुढील वादांचें विश्लेषण केल्यास आढळून येईल कीं, प्रत्येक " वाद " आमचेडून स्वार्थत्यागाची अपेक्षा व मागणी करतो. चोहोंकडे आज अशान्त व अस्वस्थ असें वातावरण निर्माण झालें आहे. अशा स्थितींत प्रत्येक भारतीय स्त्रीपुरुषानें राष्ट्र-रक्षणार्थ आपापल्यापरी शक्य तो स्वार्थत्याग केला पाहिजे.

– आणि परस्परांचे दोषच उकलून काढण्यांत आमची शक्ति वेचली गेल्यास आमची पुण्याई सरलीच म्हणावें लागेल. ज्या महाराष्ट्रीय जनतेच्या पूर्वजांनीं भारताच्या स्वातंत्र्यसंपा-दनाच्या प्रयत्नांत अग्रेसरत्व पटकाविलें, त्या जनतेनें आपण किती दक्षतेनें वागावयाचें आहे हें ओळखून वागावें हीच आग्रहाची विनंति आहे.

[११]

ॐ विजयपूर ता. २-९-५७

श्रीयुत बाबुराव (गोखले) यांसी-

श्रीसमर्थभक्त श्री बाबूराव वैद्य स्वर्गवासी झाले हें वाचून वाईट वाटलें. त्यांनीं फार महत्त्वाचें सज्जनगड-जीर्णोद्धाराचें कार्य आपल्या हातीं घेतलें होतें. ३५० वी श्रीसमर्थजयन्ति ऐतिहासिक आणि या काळाच्या दृष्टीनें फार महत्त्वाचा मोठा पर्व आहे. त्यावेळीं त्यांच्यासारखा कार्यकर्ता पुरुष आमच्यांतून उठून जावा ह्या श्रीरामप्रभूच्या इच्छेपुढें मान लवावी लागते.

"१८५७ चा महाराष्ट्र" पुस्तक वाचलें. त्यांत आपण ही मोहीम जनतेची होती हें जें महत्त्वपूर्ण विधान साधार प्रतिपादलें आहे तें फार महत्त्वाचें आहे. कांहीं दिवसांपूर्वी इकडील प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य श्री. हरि रामचंद्र दिवेकर ह्यांनीं एका व्याख्यानांत सांगितलें कीं, "हें स्वातंत्र्यकार्य कांहीं राजांचा (असंतुष्ट राजांचा) प्रयत्न होता." त्याला हें पुस्तक योग्य उत्तर आहे.

—राघवदास

[१२]

"ग्रामदानाबद्दल जनमत समजावून घेणें जरूरीचें आहे. ग्रामदानानें भूमिसमस्या सुटूं शकेल असें जनमत असेल तर या कार्याला प्रेरणा देणें शक्य होईल. जर जनमत प्रतिकूल असेल तर तेंही आम्हांला माहीत होणें आमच्या हिताचें आहे. कारण त्यामुळेंच आमच्यासारख्या सेवकांतील उणीवा आह्यांला समजूं शकतील."

[मध्य-प्रदेशांतून पदयात्रा चालली असतांना सरगुजा जिल्ह्यांतील पुरान-पानीहून लिहिलेल्या एका पत्रांतील पूज्य बाबा राघवदासांच्या हातचा वरील उतारा असून त्याच पत्रांतील दुसरा उतारा असा-]

[१३]

"आज समाजाची चालच उलटीं पडली आहे. श्रम करणारांची घृणा केली जाते आणि शोषण करणारांचा सन्मान केला जातो. यासाठींच आज कमींतकमी काम, अधिकांत अधिक दाम आणि आराम याचाच बोलबाला होतो. आज हरिजनांकडेच पहा कीं, दिवसभर ते शेतांत निढळाचा घाम गाळतात, पण ते उपाशी राहतात. शेणांतून निघणारे ('गोबरहा') धान्य खाऊन दिवस काढतात. शेतकरी कापूस पिकवितात, विणून कापड तयार करतात पण ते उघडेच राहतात. मजूर कारखान्यांतून काम करतात आणि तपेदिकासारख्या भयानक रोगांची शिकार बनतात आणि मरतात. त्यांच्या मुलाबाळांची विचारपूस कोणी करीत नाहीं. ही भयंकर परिस्थिति कायमच ठेवावयाची आणि कल्याण-कारी समाजाची कल्पना करावयाची हा पक्षपातीपणा आहे. ग्रामदानाची चळवळ या सर्व वर्तमानमूल्यांना बदलण्याची एक क्रांतिकारक चळवळ आहे. त्या नव्या वाटचालीसाठीं आम्हीं देशांतील नवयुवकांना आवाहन करीत आहोंत."

[१४]

भूदानपदयात्रा ॐ ता. २०।१।१९५७

श्री. चि. उषाताई, श्री. चि. तात्यासाहेब,

अनेक आशीर्वाद.....माझी प्रकृति बरी आहे. ४७ जिल्ह्यांत पदयात्रा झाली असून ता. १२-४-५७ पर्यंत आणखी ४ जिल्ह्यांत ती होऊन जाईल. आणि त्यानंतर उत्तरप्रदेश सोडून मध्यप्रदेशांत पदयात्रा करणार आहे.

ही पदयात्रा कां ? हा प्रश्न उठतो... माझें उत्तर हें आहे कीं आपण सर्वजण एका कुटुंबाचे आहोंत ही मूळ कल्पना; गांवांत किंवा आळींत आपले संबंध अशाच प्रकारचे असतात. म्हणून पुष्कळशीं कामें सहज होऊन जातात. आपल्या गांवांत बलुत देण्याची पद्धत होती. आणि आजसुद्धां आहे. ह्याचा अर्थ असा

कीं, शेतांत जें उत्पन्न होतें त्यांत सगळ्यांचा हक्क आहे. आणि सगळ्यांनीं मिळून शेतीला लागणारीं कामें करावयाचीं. पण आज आपण तींच कामें पैशानें करूं लागलों, म्हणून आमचे प्रेमसंबंध कमी झाले. आणि आज आपण एक दुसऱ्याला अधिक कसे लुबाडूं हें डोळे उघडून आपण पहात असतों. त्यामुळें परस्पर अविश्वास आणि ईर्षा, राग-द्वेष फारच वाढला आहे. आणि त्याचे भयंकर परिणाम दोन महायुद्धांच्या रूपानें ह्या लहानशा आयुष्यांत आपण सर्वांनीं पाहिले. आतां तर अणुबॉम्बच तयार झाला आहे. त्याच्या योगें एका क्षणांत कोट्यावधि माणसें मारून टाकलीं जातील. नुसते त्याचे प्रयोग पाण्यांतील माशांना विकारीं विषयुक्त, मारून टाकीत आहेत. जपानांत आज पावसाचें पाणी पिऊं नये असा सरकारी आदेश आहे. कारण त्यांत दोष आहे. जो बॉम्ब फुटल्यानंतर एक लक्ष फूट उंच धूर निघतो आणि तीन मैल व्यास आणि नऊ मैल परीघाची ज्यांतून ज्वाला निघते, तो किती भयंकर असेल ह्याची कल्पना सहज करतां येईल. जो बॉम्ब १९४५ मध्यें जपानवर पडला होता त्यापेक्षां ७५० ते १००० पटींनीं हे बॉम्ब नाश करणार आहेत असे वैज्ञानिक म्हणतात. कांहीं देशांतील सैनिक अधिकारी असें म्हणूं लागले आहेत कीं, आज जगावर मृत्यूची छाया आहे. आजचा हा बॉम्ब जगाला पुढें काय करून टाकणार आहे हा मोठा यक्षप्रश्न आहे. त्याचें उत्तर सर्वांना द्यावयाचें आहे. त्यांपैकींच हें भूदानयज्ञ, सर्वोदय हें एक उत्तर आहे. सर्वांचा उदय गरीबांना मदत दिल्यानें आणि सुखवस्तु कुटुंबांनीं मदत दिली म्हणून त्यांचा उदय म्हणजे त्यांचेविषयीं गरीबांच्या अंतःकरणांत प्रेम-आपलेपणा वाढणें हा सुद्धां उदयच म्हणावयाचा. श्री भगवान् कृष्ण गीतेंत म्हणतात- "जो आपल्याकरितां शिजवितो तो पाप खातो, अन्न खात नाहीं." तेव्हां आपल्या परिश्रमांत, आपल्या उत्पन्नांत ज्यांचा हक्क आहे तो त्यांना देणें आमचें कर्तव्य आहे. हें कर्तव्य-पालनच पुढें मोठ्या संकटांतून आम्हांला निभावून नेईल. कर्तव्य

हें अधिकारांपेक्षां श्रेष्ठ आहे. आई बाळांचें पालनपोषण करतें. तें कर्तव्यबुद्धीनेंच ना ? नाहींतर लहानसें बाळ तिचा कोणता स्वार्थ ह्यावेळीं साधूं शकणार आहे ? कर्तव्य हें खरोखरच आमच्या जीवनांत फार महत्त्वाचें, आणि त्याचीच अपेक्षा आपण भूदान-यज्ञांत करीत असतो.

भूदानयज्ञाचें निमंत्रण-श्रीतुलसीदल-पाठवीत आहे. हें मंगल निमंत्रण-पत्र वाचून जो भाव मनांत येईल त्याप्रमाणें आपल्या शेजारच्या गरीबांचे ठिकाणीं घर करावयाचा आहे. पूर्वीं पीठ दळून आणि असेच काबाडकष्ट करून बरींच कुटुंबें रहात असत. पण आतां हे लहान ग्रामोद्योग बंद पडले आणि हीं गरीब कुटूंबें असहाय्य झालीं. पूर्वीं घरोघर चरखा चालत असे आणि आपण कापडांकरितां स्वावलंबी असूं. पण आतां तो चरखा बंद झाल्यामुळें आपण वस्त्रांकरितां परावलंबी तर आहोंच पण उत्पन्न कमी झाल्यामुळें मध्यम वर्गाचीं स्थिति अत्यंत दयनीय झाली आहे. महागाई तर वाढतच आहे. पण उत्पन्न वाढत नाहीं. तरी आपल्या पायावर उभा राहण्याचा प्रयत्न करावयास हवा ना ? मी या पत्राबरोबरच कांहीं साम्ययोगाचे अंक पाठवित आहे. त्यावरून कामाची कांहीं कल्पना येईल. आपणच आपला उद्धार करावयाचा असा श्रीभगवन्ताचा उपदेश श्रीगीतेंत आहे. त्याचेच धडे ह्या यज्ञांत आपण शिकत आहोंत. ह्या तुळशीदळांत आणखी तुळशीदळ मिळवून आपल्या परिचित कुटुंबांत देणें शक्य असेल तर तें द्यावयाचें आहे. महाराष्ट्रांतसुद्धां भूदानपदयात्रा चालली आहे आणि संत विनोबा तेथें आल्यावर त्यांना २००० ग्रामदान द्यावयाचें, असें बोलणें चाललें आहे. सद्भावना उत्पन्न करणें हें मुख्य काम आहे. आपण सर्व मनुष्यें आहोंत म्हणूनच ह्या सद्भावनेची, परस्पर-सहकार आणि मदतीची अपेक्षा आहे. आपण सर्व त्या दृष्टीनें जें करणें शक्य आहे तें करून आपलें कर्तव्यपालन करूं या. यश श्रीभगवंताच्या हातीं. मनुष्याला केवळ

आपल्या तर्फे प्रयत्नच करावयाचा आहे. ह्याविषयीं जितकी चर्चा करणें शक्य असेल तितकी करावयाची आहे. आपल्या तर्फे योग्य वातावरण तयार करणें हें आपलें कर्तव्य. बाकी प्रभुची इच्छा. तरी हें निमंत्रणपत्र वाचून जें करणें शक्य असेल तें करा एवढेंच. सर्वांस यथायोग्य.

आपला
–राघुमामा

[१५]

ॐ.

श्रीमती महोदयी, नमस्कार वि. वि.

श्रीसंत विनोबाजीने श्रीसंत मुक्ताबाई आणि श्रीसंत जनाबाई ह्या दोन्ही महाराष्ट्रीय विभूतिमातांचीं जीं नांवें सुचविलीं तीं खरोखरच फार महत्त्वपूर्ण आहेत. आमचें माता–पंचायतन श्रीमुक्ताबाई, श्रीजनाबाई, श्रीजिजाबाई, श्रीअहिल्याबाई, श्रीलक्ष्मीबाई. हें परमार्थ आणि व्यवहार यांचें मूर्तिमंत आदर्शस्वरूपच आहे. त्याची पूजा घरोघर व्हावयास पाहिजे. भारतीय राष्ट्राला ही फारच मोठी देणगी आहे.

ह्यांचें दर्शन आणि चरित्रचिंतन, नित्यगायन घरोघर सतत व्हावें ह्याकरितां त्यांचीं चित्रें आणि त्यांच्याविषयीं लिहिलेलीं भजनें, गाणीं हीं प्रचाराच्या दृष्टीनें आवश्यक वाटतात.

मुलींचा भों (ड) ला, झोपाळ्यावरचीं गाणीं, शेतांत काम करणाऱ्या बायकांचीं गाणीं, आणि अन्य प्रसंगीं म्हटलीं जाणारीं गाणीं ह्यांचा प्रचाराच्या दृष्टीनें फार उपयोग होणार आहे. आजच्या अनुपयुक्त सिनेमाआदींत म्हटल्या जाणाऱ्या गाण्यांना ह्यांचा आळा बसेल. सात्विक भावना जागृत करण्यास मदत मिळेल.

आज आमच्या समाजांत संयमी वृत्ति कमी होत असून उच्छृंखल वृत्ति वाढत आहे. त्याचें नियंत्रण करण्यास प्रयत्न

व्हावयास हवेंत, ह्या (मातां) चीं संक्षिप्त जीवनचरित्रें मोठ्या टाइपांत सरळ भाषेंत–बालबोध भाषेंत–मुद्रांकित केल्यानें प्रचारास मदत मिळेल. आमचा हा (राणी लक्ष्मीबाईचा शतसांवत्सरिक) महोत्सव सार्थक व्होवो हीच हार्दिक इच्छा.

पडाव कऱ्हाड

विनीत
राघवदास
२७–५–५७

[१६]

पैदलयात्रा हरदोई
पडाव–कासीमपूर
२०।१।५७ (सत्, ता. अवन)

श्रीमती सौ. ताई दिवेकर
यासी सा. न. नि. वि.

आपका पत्र मिला । यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुअी कि आपकी समितीकी ओरसे श्रीमहारानी लक्ष्मीबाईजीका स्मारक नाशिकमें तयार करनेका संकल्प किया गया है । श्री जीजामाता, उदारहृदया श्री अहल्याबाई तथा वीरताकी मूर्ति श्री महारानी लक्ष्मीबाई ये तीन माताएं न केवल महाराष्ट्रका, बल्कि भारतका गौरव है । इनका जितना प्रचार करना संभव हो, करना हमारा धर्म है । इस भारतमें जितने बडे बडे तीर्थस्थान–काशीप्रयाग आदि जैसे स्थानोंमें श्री अहिल्याबाई आदिका कोई न कोई कार्य है ही । उसी प्रकार जीजामाताकी देन श्रीशिवाजी महाराज और श्री लक्ष्मीबाईजीकी वीरवृत्ति राष्ट्रके लिये सब कुछ मिटानेकी, अर्पण करनेकी वृत्ति हमारे लिए सदा प्रेरणा देनेवाली रहेगी ।

मेरा यह नम्र सुझाव है कि इन तीन माताओंका वास्तविक स्मारक तो जीवितस्मारक होनेकी व्यवस्था की जाय । नाशिकमें जो होगा, सो आप सब बहिने करेगी ही । नाशिकमें सबका जाना सुलभ नहीं है । इसलिये १९५७–१९५८ शताब्दि श्राद्धके अवसर-

पर महाराष्ट्रके गाँवगाँवमें श्रद्धांजलि अर्पण करनेका विधि, कार्यक्रम हो। श्री नानासाहबकी एकमात्र पुत्री श्री मैनाजीको अंग्रेजोंने जला दिया। ऐसे अनेक ज्ञात, अज्ञात वीर है जिनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पण करनेका कार्यक्रम रखना आप सब पसंद करेगी और वह स्मारक सद्भावनाके रूपमें हो।

१८५७-५८ में जो हमारी हार हुअी उसका कारण था हमारी कुमति एकमात्र फूट। एकका दूसरोंपर अविश्वास। और इसीका यह परिणाम था कि अंग्रेजोंने खुले आम हजारो देशभक्तोंको उत्तर-प्रदेशके कई जिलोंमें पेशेंपर, फाँसीपर लटकाकर मार डाला है। हमारे देशमें हमारे देशभक्त पूर्वजोंको मुठ्ठीभर अंग्रेजोंने ये जघन्य कार्य खुले आम किया, हम सब देखते रहे। और अंग्रेजोंकी २-४ को हमारे देशद्रोही भाईओंने बचाया। वे रियासतदार बनाये गये। इससे अत्यंत दुःखदायी कार्य और क्या हो सकता है? इसलिये इस महान् भूलका एक मात्र प्रायश्चित्त सद्भावना जागृत करना है, सुमतिही है।

मैं अपनी पदयात्रामें रोजबरोज इस सुमतिको याचना करता हूँ। आज श्री संत विनोबाजी जो सर्वोदयका विचार दे रहे हैं वह भी इसीलिये कि स्वतंत्र भारतकी रक्षा सुमतिही करेगी। इन ऐतिहासिक माताओंने अपने पावन चरित्रसे हमें यही पाठ पढाया है। भगवान् हम सबको सद्बुद्धि दे कि इन माताओंके सच्चे वंशजके रूपमें अपनेको ढाल सके, तैय्यार कर सके। इस भूदान-यज्ञका निमंत्रण श्रीतुलसीदलके रूपमे मैं आपकी सेवामें भेज रहा हूँ। आप सब माँबहने कृपा कर इसको स्वीकार करें। अपने अपने कार्यक्षेत्रमें जहाँतक संभव हो इस श्रीतुलसीदलमें और दल मिलाकर घरघर पहुँचानेकी कृपा करेगी। माँबहनें गृहलक्ष्मी होती हैं। उनके मंगल हाथोंसे यह मंगल निमंत्रण पहुँचाया जाय यही नम्र निवेदन है।

क्या यह संभव है कि इन तीन माताओंके एक साथ चित्र प्रकाशित किये जाय और उनके नीचे आदर्श वाक्य हो, जो उनके

जीवनकार्यको बताते हो और महाराष्ट्रकी हर कन्या-पाठशाला और माँबहनोंकी जो भी सार्वजनिक स्थान हो, उनमें खास तौरपर और, संभव हो तो, सभी शिक्षासंस्थाओंमें, घरोंमें पहुँचानेका प्रबंध किया जाय, जिससे उनका पावन स्मरण बना रहे। या, प्रत्येक गाँवमें इनके पावन स्मृतिमें एक छोटा या बडा सहजसुलभ स्मारक हो। प्रश्न पैसेका नहीं, सुविधाका है, जिससे याद बनी रहे। मुख्य बात याद बनी रहे, यह है। आप सब उद्योगशीला हैं। आप चाहेगी तो बहुत कुछ कर सकती हैं। प्रयत्न करना हमारा कार्य है, यश भगवानके हाथमें है।

मुझे पुरा भरोंसा है कि आपकी समिति जो भी कार्य करेगी, वह हमारे राष्ट्रकी प्रतिष्ठा बढानेवालाही होगा। सब माँबहनोंको प्रणाम।

विनित

राघवदास

बाबा राघवदासकी कई संस्थाएँ

श्रीपरमहंसाश्रम

श्रीयोगिराज अनंत महाप्रभुजीकी मृत्युकेबादही श्री बाबा राघवदासजी आये और अपने गुरुदेवकी कीर्ति-विस्तारका प्रयत्न करने लगे। फलस्वरूप विक्रमसंवत् १९७४ के आषाढमासमें परमहंसाधमकी स्थापना हुई। एक संस्कृत पाठशाला खुली और उसकेबाद राघवदासजीने गुरुकुल कांगडीके ढंगपर चलानेकेलिये ब्रह्मचर्याश्रमकी स्थापना की। ब्रह्मचर्याश्रममेंसे निकले हुए विद्यार्थियोंमेंसे श्री स्वर्गीय कौशलेंद्र तथा रघुनाथ पाठकमें अपूर्व प्रतिभा थी। जिनका स्मरण करके राघवदासजी रो पडते थे। जब राघवदासजी ब्रह्मचारियोंका दल लेकर गोरखपूरमें महात्माजीका स्वागत करने, गुफा छोडनेके बाद, गये तो महात्माजीने श्री विश्वनाथ नामक ब्रह्मचारीसे पूछा कि पढनेकेबाद क्या करेंगे ? तो उत्तर दिया देशसेवा करेंगे। इसपर महात्माजी प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिये। ब्रह्मचर्याश्रममें ब्रह्मचारियोंमें श्री वरुणेंद्र और धीरेन्द्रके नाम भी विशेष उल्लेखनीय है। इसमेंसे अधिकांश देशसेवामेंही जीवन व्यतीत कर रहे हैं।"

गुरुदेवकी स्मृतिमें राघवदासजीने परमहंसाश्रमकी स्थापना की और परमहंसानंत-संस्कृत पाठशालाकी नींव डाली। पहले धार्मिक भावनासे ये संस्थायें चलती रहीं। पर ब्रह्मचर्याश्रमका कार्य तो राघवदासजीके राजनैतिक क्षेत्रमें आ जानेकेबाद शिथिल होता गया। तो भी संस्कृतपाठशाला अबाधगतिसे चली आ रही है।

आश्रमके द्वारा सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक और राजनैतिक सेवायें धीरे धीरे बढने लगीं। सांस्कृतिक संस्थाओंमें

श्रीगीतारामायणपरीक्षा–समिती, अखंड संकीर्तन, यज्ञ, अनाथ–गोसेवाश्रम, परमहंसानंत–संस्कृतपाठशाला, वेदविद्यालय सोहनाग, साहित्यिक तथा राजनैतिक क्षेत्रमें काम करनेवाली संस्थाओंमें भी राष्ट्रभाषा–महाविद्यालय, श्रीकृष्ण–इंटर–कॉलेज, श्रीसीताराम ग्रामोद्योग–विद्यालय, और श्री लाजपतअनाथालयके नाम विशेष उल्लेखनीय है। श्रीगीतारामायण परीक्षाओंके छे सौसे अधिक केंद्र सारे भारतवर्षमें तथा ब्रह्मा आदिमें मिलकर हैं, जिनमें तेरह हजारके लगभग छात्र प्रतिवर्ष बैठते हैं। इस परीक्षाका प्रधान कार्यालय पहले श्रीपरमहंसाश्रममेंही था। बादमें १९४२ ईसवी जब आश्रम जब्त हो गया और कॅप्टन मूरने रामायण और गीतापरीक्षाओंके कार्यालयको तहस–नहस कर दिया, तो इन परीक्षाओंका संचालन गीताप्रेस, गोरखपूरसे होने लगा और हो रहा है। एक सब भारतीय धर्मकी परीक्षा भी आश्रमसे संचालित हो रही थी। इसमें हिंदु, बौद्ध, जैन, सिख्ख आदि धर्मोंके प्रधान ग्रंथ पाठचक्रममें रखे गये थे। इस परीक्षाका प्रथम लक्ष था हिंदुधर्मका धार्मिक समन्वय।

श्रीपरमहंसाश्रमकेद्वारा जो धार्मिक कार्य हुअे है उनमें रुद्रमहायज्ञ और विष्णुमहायज्ञ, अखिल भारतीय संकीर्तन–संमेलन तथा अखंड–संकीर्तन, श्रीअभय राघवमंदिर नाम विशेष उल्लेखनीय है। १९४० ईसवीमें अखिल भारतीय–रूप–कलासंकीर्तन–संमेलन हुआ था जिसमें एक लाखसे अधिक प्रतिनिधियों और दर्शकोंकी भीड थी। अखंड–संकीर्तन १९३५ प्रारंभ होकर १९५० इसवी तक अखण्डरूपसे चलता रहा। इसका इतना व्यापक प्रभाव पडा कि आसपासके जिलोंमें खेतोंमें काम करते समय भी किसान संकीर्तन करने लगे थे और गाँवगाँवमें इसका प्रभाव दिखाई दे रहा है। महायज्ञोंमें काशीके बडे बडे विद्वान् एवं आचार्य बुलाए गये थे। ऐसे यज्ञ इनके पूर्व इधर कभी नहीं हुअे थे। १९५० में आश्रममें श्रीअभय–राघवमंदिरकी स्थापना हुअी जो कई वर्षोंमें बनकर तैय्यार हुआ और जो अपने ढंग का अनुठा मंदिर है।

आश्रमके अन्य धार्मिक स्थानोंमें श्रीअनंत-महाप्रभुकी गुफा, चरणपादुका, श्रीहनुमानजीका मंदिर और गीताभक्त प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्रीरामप्रसाद बिस्मिलका चबूतरा है। आश्रमकी धार्मिक देनमें परमहंसाश्रम संस्कृत-पाठशाला और वेदविद्यालयकी सेवाओंकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

आश्रमकेद्वारा जो कोटि कोटि सामाजिक सेवाएं हुअी है, उनका विवरण देना अत्यन्त कठिन है। देवरिया, अजमगढ तथा गोरखपूरका कोना कोना आश्रमकी सामाजिक सेवाओंसे परिचित है। १९३८ की विकराल बाढमें एक मासतक आश्रमकी समस्त संस्थाएं बंद थीं। अध्यापक तथा छात्र बाढ-पीडितोंकी सेवामें अनवरत एक मासतक लगे रहे। संस्थाओंमें बाढपीडित ठहराये गये थे। १९३४ ई. के भूकम्पमें आश्रमका जत्था मंगेर, दरभंगा आदि जिलोंमें भी श्री सत्यव्रतजी महाराजके संरक्षणमें एक मास तक भूकम्प पीडितोंकी विविध सेवाएं करता रहा। १९५० की भयंकर बाढमें भी सेवाके कार्यमें आश्रम आगे रहा। शिक्षाके द्वारा आश्रमने जो सार्वजनिक सेवा की है उसका विवरण तो अलगही है। मातृमंदिरकी स्थापना करके उत्तम दायियोंको सैंकडोंकी संख्यामें आश्रमनेही पैदा किया। मातृजातिकी सेवामें कुछ दिनोंतक इस संस्थाने महान् उपकार किया।

भगवान् श्री लोकमान्य तिलकजीकी मृत्युके बाद जबसे राघवदासजीने गुफा का परित्याग किया, आश्रम तभीसे राज-नीतिका केन्द्र बन गया। १९२१ में बरहजके तथा आश्रमके बीसों आदमी जेल गये। जिलेभरमें घूमघूम कर राघवदासजीने राजनैतिक चेतना फैलाई और सैंकडो कर्मठ कार्यकर्ता तैय्यार किये। १९२५ से १९२९ तक आश्रमकी प्रगति शिक्षाकी ओर रही। जिलेमें सैंकडो पाठशालाएं, मिडल स्कूल और प्राथमिक स्कूल खुले। आगे चलकर ये संस्थाएं १९३०-१९३२ में राज-नीतिमें सहयोग देनेमें पूर्ण सफल हुअीं। इन संस्थाओंमें इतने त्यागी युवक काम करते थे जो चिटुकी लेकर खाते थे या वेतनके

रूपमें तीन रुपये तकमें काम चला लेते थे। १९३०–३२ के नमक सत्याग्रहमें राघवदासजीने बरहजसेही नमक–आन्दोलन शुरू किया और पैदल तीन सौ मीलतक पचासों स्वयंसेवकोंका जत्था जिलेके कोनेकोनेमें घूमा। १९३२ में जत्था बस्तीतक पैदल गया था। १९४०–४२ के आंदोलनोंमें भी आश्रमने सक्रिय भार लिया था। १९४२ में उत्तरप्रदेशमें श्रीपरमहंसाश्रम और नॅशनल हेरल्ड कार्यालय दोही संस्थाएँ सबसे पहले जब्त हुईं। वर्षोंतक कई संस्थाएं बंद रहीं। उस समय श्री ब्रह्मचारी सत्यव्रतजीने अथक प्रयाससे फिर सभी संस्थाओंका संचालन कराया। फिर भी ब्रिटिश–शाहीकी दृष्टि हमेशा कुपित रही, क्योंकि आश्रमके जनक राघवदासजी फरार थे। १९४७ में भारत स्वाधीन हुआ। उसके बाद भी आश्रम राजनीतिमें सहयोग देता आ रहा है। आश्रमकी यह विशेषता है कि यहाँ हर तरहकी राजनैतिक विचारधाराके लोग रहते है। फिर भी इस विविधतामें एकता सन्निहित है। १९४२ में लाजपत अनाथालय, ग्रामोद्योग विद्यालय तथा अन्य संस्थाओंकी ब्रिटिशशाहीकेद्वारा अपार क्षति हुअी थी।

श्रीपरमहंसानन्त–शिक्षामंदिर

१९४२ में जब आश्रम जब्त हो गया तब श्रीब्रह्मचारी सत्यव्रतजीने पुराणी संस्थाओंका नया ढंग निकाला। श्रीपरम–हंसानन्त–शिक्षामंदिरकी स्थापना हुअी और शिक्षाविधाके अनुसार उसकी रजिस्ट्री कराई गई। परमहंसानंत–शिक्षामंदिरमें श्रीपरमहंसानंत संस्कृत पाठशाला, श्रीराष्ट्रभाषा महाविद्यालय, श्रीकृष्ण इन्टर कॉलेज, श्रीसीताराम ग्रामोद्योग विद्यालय, श्रीचंडिका वेदविद्यालय सोहनाग, श्रीसरोजिनी कन्या विद्यालय बरहज सम्मीलित हैं।

श्रीपरमहंसानन्त संस्कृत पाठशालामें शुरूसे प्रथमा–परीक्षासे लेकर आचार्यतककी पढाई होती है। इस पाठशालासे डेड़ हजार छात्र संस्कृतकी शिक्षा प्राप्त किये है। देशविख्यात आजमगढ़के

१९४२ के मधुवन-काण्डके संचालक इसी पाठशालाके छात्र श्री मंगल ऊर्फ ऋषिजी, गोरखनाथ और रामसुंदर शास्त्री थे। यहाँसे निकले संस्कृतके छात्र जहाँ भी है. राष्ट्रीय भावनाओंसे ओतप्रोत मिलेंगे। साथही उनमें आश्रमीय संस्कृतिका दर्शन भी होगा। इस संस्थामें पाँच अध्यापक अध्यापन कर रहे है। इसका भवन तथा छात्रावास अत्यंत सुहृद् है। इस संस्थाके प्राचीन छात्र श्री दिलीपनारायण शास्त्री जो आजकल हाटामें है, देशके सच्चे सेवक है।

१९३१ ई. के गान्धीअर्विन-समझौतेकेबाद देशके कर्णधार महात्मा गांधीजीका ध्यान राष्ट्रभाषाप्रचारकी ओर गया। आपने दक्षिण भारत तथा आसाम-बंगालके दौरे राष्ट्रभाषाकी दृष्टीसे किये। आपके साथ राघवदासजी भी थे। महात्माजीकी प्रेरणा और इच्छासे श्रीराष्ट्रभाषामहाविद्यालयकी स्थापना बरहजमें हुअी। विद्यालयके खुलतेही आसाम, बंगाल, कन्नडा, मलयालम, महाराष्ट्र. गुजरात, उत्कल आदि अहिंदी भाषा-भाषी प्रांतोके छात्र हिंदी पढने बरजहमें तो आयेही। इसके अतिरिक्त ब्रह्मा, श्याम, चीन, कम्बोडिया, तिब्बत, मलाया, सीलोनतकसे भिक्षु यहाँ आकर हिंदीकी शिक्षा ग्रहण किया। इस संस्थामें हिंदी-साहित्यसमेलन प्रयागकी "साहित्यरत्न" परीक्षातक केंद्र है। प्रतिवर्ष यहाँसे दो सौसे अधिक छात्र प्रथमा, विशारद और साहित्यरत्न आदि परीक्षाओंमें बैठते हैं। परीक्षार्थिओंकी सुविधाकेलिये नियमित रूपसे पढाईके अतिरिक्त व्याख्यानमालाका भी आयोजन प्रतिवर्ष होता है। इस संस्थाने उत्तरप्रदेशके पूर्वी जिलोंके बीच अपूर्व साहित्यिक चेतना पैदा की है और गरीब किसानोंके बच्चोंको अल्प श्रम, समय और धनमें हिंदीका योग्य विद्वान् बना दिया है। मद्रास और आसाममें जो यहाँ छात्र है, आज भी सेवाकी दृष्टीसे हिंदीका प्रचार कर रहे हैं। आसाममें हिंदीके छोटेसे बडे सभी प्रचारक प्रायः इसी विद्यालयके छात्र है। विद्यालयने हिंदीके प्रचारमें बडा योग दिया है। यहाँसे

छोटे मोटे हिंदीकेलिये चार पाँच आन्दोलन चल चुके जिनमेंसे तीन उत्तरप्रदेशीय तथा एक अखिल भारतीय था। इस संस्थाका नाम भारतकी प्रमुख हिंदीकी संस्थाओंमें है। विद्यालयने सदा राष्ट्रीय और सामाजिक कार्योंमें हात बटाया है। विद्यालयमें श्रीराष्ट्रभाषापुस्तकालय है जिसमें २००० पुस्तकें हैं। बापूवाचनालयमें लगभग ३० दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक और त्रैमासिक पत्र आते हैं।

१९३५ के पूर्व आश्रमका प्रधान लक्ष्य संस्कृत एवं हिंदीके ही प्रचार की ओर था। इन दिनों अंग्रेजीकी शिस्त इतनी महंगी पडती थी कि गरीब किसानोंके बच्चे अंग्रेजी पढनेसे वंचित होते थे। विना हायस्कूल उत्तीर्ण हुए, नौकरियोंका मिलना कठीन था। गरीब किसानोंकी माँगका समर्थन राघवदासजीने किया और काँग्रेसकी स्वर्णजयंतिके अवसरपर दिसंबर १९३५ ई. में हजारो किसानोंकी प्रेरणासे राघवदासजीने श्रीकृष्णहायस्कूलकी स्थापना की। १९४२ में इस स्कूलके प्रधानाचार्य चंद्रिकाप्रसाद वर्मा B.A.B.T. गिरफदार कर लिये गये और संस्था कई महिने तक बन्द रही। अन्य हायस्कूलोंकी अपेक्षा यहाँका वातावरण सांस्कृतिक, धार्मिक, राष्ट्रीय एवं सामाजिक है। हायस्कूलका धर्मघंटा अपनी एवं प्रबल विशेषता रखता है जो स्कूलके जन्मकालसेही चला है। धर्मघंटामें प्रतिदिन उच्च कोटीके धार्मिक, सामाजिक और चरित्रगठन-संबधी व्याख्यान होते हैं। पढाईके अतिरिक्त इस स्कूलके छात्रोंको दस्तकारी और औद्योगिक शिक्षा भी दी जाती है। इस स्कूलमें ढाई हजार छात्र शिक्षा प्राप्त कर चुके है। कताई, बुनाई, धुनाई, बढईगिरी, कागज बनाने और कृषिकी शिक्षाका प्रयोगात्मक ज्ञान कराया जाता है। इस स्कूलमें १९३७ से १९३८ तक जिला बोर्ड देवरिया, गोरखपूर, आजमगढ, बलिया, गाजीपूर, बस्ती आदि छः जिलोंके तीन सौ अध्यापकोंको कताई, बुनाईकी दीक्षा दी गई है।

श्री ग्रामोद्योग विद्यालय १९३७ ई. में ग्रामीण दस्तकारियों और उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेकेलिये खुला। इस विद्यालयमें कताई, धुनाई, बुनाई, बढईगिरी, कागज बनाने, जूते बनाने, बटन बनाने, तेलघानी की शिक्षा दी जाती थी। १९३७ में यहाँ बडा ग्रामोद्योग-मेला लगा था, जिसकी प्रदर्शनीमें हाथकी बनी वस्तुएं आयी थी। १९३७ में ग्रामसेवक-विद्यालय खुला था जो दो वर्षोंतक चला। गुड़-विकास-विभाग खुला था। जिसमें गुड़ बनानेकी शिक्षा तीन चार जिलोंके नवयुवकोंको दी गई थी। १९४२ के दमनचक्रमें ये सारी संस्थाएं तहसनहस कर दी गई थी। इनका संचालन फिर नये ढंगसे हो रहा है। सदाकेलिये कताई, बढईगिरी और चर्मकलाकी शिक्षा दी जा रही है।

वेदोंकी शिक्षा इस युगमें लुप्तप्रायसी हो चुकी है। इस ओर न तो वेदोंके विद्वान्‌ही मिलते हैं। इस अभावकी पूर्तिकेलिये आश्रमकी ओरसे श्री परशुरामकी तपोभूमि सोहनागमें वेद-विद्यालयकी स्थापना की गई थी। इस संस्थाके फलस्वरूप आसपासके जिलोंमें सर्वत्र वैदिक विद्वान् और कर्मकाण्डी विद्वान् सुलभ हो गये हैं। वेदोंकी पढाईकी व्यवस्था, काशीको छोडकर, उत्तर प्रदेशमें कहीं नहीं थी। यह संस्था सांस्कृतिक दृष्टीसे बहुत बडा कार्य कर रही है। यहाँसे अबतक पाँच सौ वैदिक छात्र निकल चुके है। इस संस्थाका संचालन श्री पं. कमलनाथजी शुक्ल वेदाचारीने अपना सारा जीवन समझाकर किया है। राघवदासजीके आवाहनपर सरकारी-संस्कृत-कॉलेज काशीकी अच्छी नौकरीको लात मार कर सोहनागके वीरान खंडरमें वेदप्रचारकेलिये वे बैठ गये।

भारतके स्वतंत्र हो जानेके बाद उत्तरप्रदेशकी राज्य-पालिका श्रीमती माननीय सरोजिनीदेवी नायडू हुअी। भारतके स्वतंत्र होतेही एक महिलाका इस प्रकार सन्मान हुवा। आश्रमने नायडू सरोजिनीदेवीके नामपर १५ अगस्त १९४७ को ही सरोजिनी-कन्या-विद्यालयके खोलनेकी घोषणा की। युवकोंको

दीक्षित बनानेमें एकही पिढी सग्यान हो जाती है। मगर युवतीओंको दीक्षित बनानेमें एक पिढी तो सग्यान हो जाती है, बल्कि दूसरी पिढीकी शिक्षाकी पूर्व तैय्यारी भी हो रहती है। इसीलिये बरहजके सामूहिक जुर्मानेकी रक्कमको उत्तरप्रदेशकी सरकारने इस संस्थासे संचालनकेलिये लौटा दिया।

प्राकृतिक स्वयंचिकित्सालय उत्तरप्रदेशीय गान्धीस्मारक-निधीकी ओरसे खुल गया है। इसके चिकित्सक अखिल-भारतीय-चिकित्साके विशेषज्ञ तथा निष्काम भावसे कार्य करनेवाले जनताके सच्चे कर्मनिष्ठ सेवक है। चारों ओर रोगव्याधियाँ है और अंग्रेजी चिकित्सा बेहद महँगी हो गई है। ऐसे समयमें इस संस्थाकी बडीही आवश्यकता है। इस संस्थासे जनताकी बहुत बडी सेवा हो सकती है।

ये सारे कार्य जनताजनार्दनकीही सहाय्यता और आशीर्वादसे चलते हैं।

उत्तर प्रदेशमें

इनके अतिरिक्त देवरिया, गोरखपूर, आजमगड, बलिया, गाजीपूर, बस्ती आदि जिलोंमें ऐसी सैंकडो संस्थाएँ है जिनका संरक्षण आश्रमको ओरसे होता है। राघवदासजीने जिस तरह वेदविद्यालय खोलकर परशुरामजीकी तपोभूमी सोहनागकी रक्षा की, उसी तरह संसारके महापुरुष भगवान् बुद्धकी निर्वाणभूमी कुशीनगरका भी उद्धार राघवदासजीने किया। वहाँ श्रीबुद्ध-इंटर कॉलेज, ज्यूनियर हायस्कूल, प्राथमिक शाला आदि संस्थाएँ चल रहीं है। वहाँकी दानवीर बिडलाद्वारा निर्मित धर्मशाला भी अपनी एक विशेषता रखती है।

उत्तर प्रदेशके बाहर

पार्श्ववर्ती बिहार और सुदूर आसाम, उत्कल, महाराष्ट्र और मद्रासमें भी कितनीही संस्थाएँ हैं, जिनके उद्भव और विकासमें आश्रमका याने राघवदासजीका हाथ रहा है। विज्ञान-

दर्शन विशुद्ध राजनीतिका प्रसार, साहित्यका निर्माण और सत्य–अहिंसाकी नींवपर वर्गहीन समाजका संघटन, यही उद्देश है। पूज्यपाद श्री १०८ योगिराज अनन्त महाप्रभु और पुण्यश्लोक महात्मा गांधीके आदर्शको सामने रखकर राघवदासजीके नेतृत्व और ब्रह्मचारी सत्यव्रतजीके देखरेखमें अनन्ताश्रम वर्तमान युगका नालन्दा या तक्षशीला हो जाये, ऐसा इरादा था। पूरा नहीं हुआ। राघवदासजीका अनुयायी वर्ग पुरा करेंगेही सही।

प्रातःस्मरणीय श्रीरामकृष्ण–परमहंस और योगिराज अनन्त महाप्रभु प्रायः एकही समयमें इस पुण्यभूमीमें अवतारित हुअे थे। थोडेही कालमें श्रीरामकृष्ण परमहंसने आध्यात्मिक दृष्टीसे देशका कायाकल्प कर दिया। श्रीसरजूतट–स्थित बरहजको तपोभूमि बनानेवाले योगिराज श्रीअनन्त महाप्रभु थे। पूर्वभारतमें श्रीरामकृष्ण परमहंसको जो स्थान प्राप्त था, यही स्थान योगिराज श्रीअनन्त महाप्रभुको पश्चिमोत्तर भारतमें था। श्रीरामकृष्ण परमहंसके पट्टशिष्य और उत्तराधिकारी विश्ववंद्य स्वामी विवेकानन्दने अपने गुरुपादके सिद्धान्तोंको विश्वके कोनेकोनेमें फैला दिया। अपना गुरु श्रीरामकृष्ण परमहंसकी योग्यताका होकर भी अपने हाथसे विवेकानन्दजीकी जैसी कर्तबगारी न होनेके कारण राघवदासजी कई बार रो पडते थे। मगर राघवदासजीका प्रभाव राजनीतिपर और समाजनीतिपर कम नहीं हुआ। उच्च कोटीके साधु होते हुअे भी श्रीसमर्थ रामदासजीकी भाँन्ति देशकी दुर्बल अवस्था देखते हुअे राघवदासजीने अपने जीवनका सजीवक मोर्तब उत्तरपश्चिम भारतके और विशेषकर उत्तरप्रदेशके पूर्वी जिलोंके सामाजिक, सामूहिक और सार्वजनिक जीवनपर और जीवनीपर किया है।

जीवनीकी तालिका

१८९६	दिजंबर १२ राघवेंद्रका जन्म
१९०१	राघवेंद्रके पिताजीका मृत्यु
१९०४	राघवेंद्रकी माताजीका मृत्यु
१९०५	राघवेंद्रका उपनयनसंस्कार
१९०६	लोकमान्य तिलकजीका कन्हाडमें दर्शन (२) श्रीशिवाजी उत्सवका प्रबंध
१९०७	स्वदेशीका व्रत शुरू
१९०८	लोकमान्यजीकी शिक्षाके बारेमें हडताल किया।
१९११	प्राथमिक शिक्षाकी अंतीम परीक्षा की।
१९१३	बम्बईमें अंग्रेजी पढ रहा था। वहाँसे अनंतके पथपर चला।
१९१४	योगीराज अनंतमहाप्रभुकी प्राप्ति
१९१६	गुरुदेव अनंतमहाप्रभुजीका स्वर्गारोहण
१९१८	ब्रह्मचर्याश्रमकी नींव डाली
१९२१	महात्माजीसे मिले राघवदासजी। पहली कैद।
१९२२	चौरीचुरा प्रकरण
१९२४ से १९२६	बुद्ध गयाका उद्धार। शिक्षण संस्थाओंकी स्थापना।
१९२७	सोहनागमें वेदविद्यालय
१९३०	हिंदी राष्ट्रभाषा विद्यालयकी नींव डाली। (२) जनजागरण
१९३१	महात्माजीके साथ राष्ट्रभाषाका प्रचार।
१९३३	बरहजमें राष्ट्रभाषा विद्यालय।
१९३४	बाढ और भूकम्पसे पीडितोंकी सेवा (२) अँग्लोवैदिकस्कूल और इंटर कॉलेजकी स्थापना
१९३५	श्रीकृष्ण इंटर कॉलेजकी स्थापना
१९३७	बलदेशके बुद्धवांग्मय परिषदके अध्यक्ष (२) ग्रामोद्योग (३) काँग्रेसके चुनावका बिगुल बजाया।

१९३८	जलप्रलयमें जनसेवा (२) ग्रामोद्योग उत्थान
१९४०	व्यक्तिगत सत्याग्रह
१९४२	परमहंस आश्रम गैरकानूनी हुआ। (२) आंदोलन करतेही गुप्तचर
१९४४	बन्दी हुअे और पागलोंमें रखे गये।
१९४६	खादी और ग्रामोद्योगकी ओर अग्रसर। (२) शहीद रामचंद्र विद्यालयकी स्थापना।
१९४७	सरोजिनी कन्याविद्यालयकी स्थापना।
१९४८	उत्तरप्रदेशके चमकदार आमदार।
१९५०	कोल्हूकरके खिलाफ सत्याग्रह।
१९५१	बालियामें एक कनाल बना लिया।
१९५२	सन्त विनोबासे बुद्धसंस्थाका शिलान्यास।
१९५५	भूदानकी पैदल यात्रा शुरू।
१९५७	म्हैसूर–सर्वोदय संमेलन। (२) ग्रामदान और संपत्तिदानका आंदोलन।
१९५८	जनवारी १५ सिवनीमें देह ब्रह्मार्पण।

आवश्यक शुद्धि

पृ.	रेखा	अशुद्धि	शुद्धि
१०	१४	जॉन्सन्	जॅक्सन
११	१८	सदाकेलिय	सदाकेलिये
१५	१	तव	तब
१६	१४	राघवेंद्वजीको	राघवेंद्रजीको
१६	१४	ज्या	दिया
१९	१४	बलिया	बालिया
२०	१	वांगमय	वांग्मय
३५	२४	फजाबादका	फैजाबादका
४३	२३	देखकरब्रिटिश	देखकर ब्रिटिश
६०	२३	शीक्षा	शिक्षा